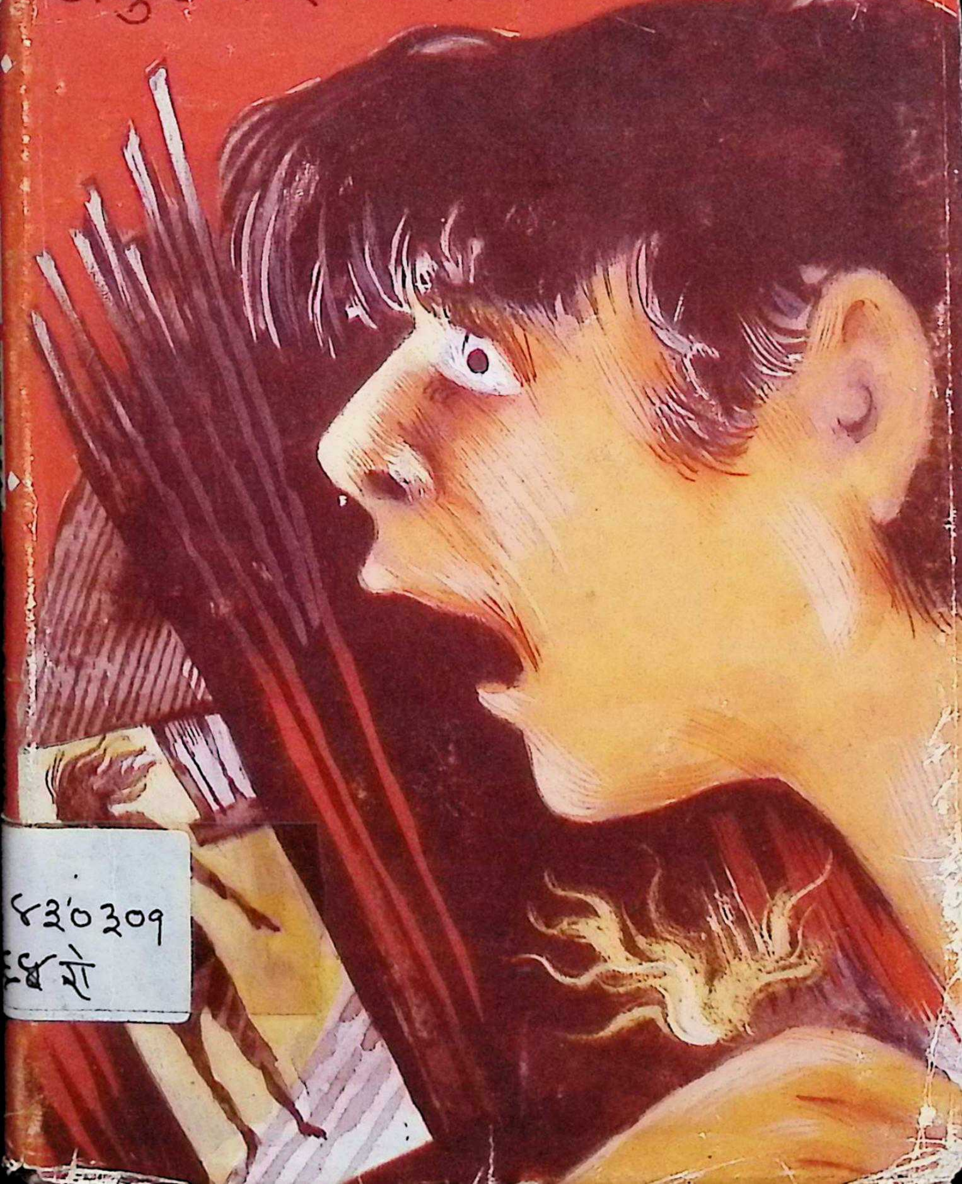
रोमांचक सत्य कथाएँ

ठाकुर घनश्याम नारायण सिंह



रोमांचक सत्य कथाएँ

दैनिक डॉन के अनुसार पाकिस्तान के उमरकूट कस्बे में आवारागर्दी के आरोप में 100 से अधिक गधों को वहाँ की धारा 550 के अन्तर्गत पुलिस ने हिरासत में ले लिया। एक सप्ताह के बाद अदालत ने, वकीलों की पैरवी पर सभी गधों को जमानत पर रिहा कर दिया।

●

शराब, गांजा, भांग, अफीम, कोकिन आदि को नशा माना जाता है। पर सबसे बड़ा नशा है सफेद मौत जो पाकिस्तान में तेजी से फैल रहा है। हाल ही में पेशावर में पाकिस्तान पुलिस ने 395 किलोग्राम सफेद मौत जब्त की थी जो पिछले तीन वर्षों में सर्वाधिक थी। अब सफेद मौत क्या गुल खिलाती है यही देखना है।

●

महाभारत की कथा है — उसीनर में स्त्रियों का साम्राज्य था। राजा, प्रजा और सिपाही सभी स्त्रियां थीं। महाराजा उग्रसेन के अश्वमेध का घोड़ा रोककर स्त्रियों की इस विशाल सेना ने महाराजा को युद्ध के लिए ललकारा था।

●

दुनिया के सबसे मशहूर तानाशाह हिटलर की डायरी को गलत साबित करते हुए जर्मन सरकार के क्रिमिनल आफिस ने रिपोर्ट दी —

- डायरियों की जिल्द में जिस सिंथेटिक मैटीरियल का प्रयोग किया गया है वह सन् 1945 से पहले आविष्कृत नहीं हुआ था।
- डायरियों में इस्तेमाल हुआ कागज। 1955 के बाद आविष्कृत हुआ।

इस प्रकार डायरियां नकली साबित हो गईं।

रोमांचक
सत्य कथाएं

ज्ञान गंगा, चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

रोमांचक सत्य कथाएं

ठाकुर घनश्याम नारायण सिंह



मूल्य : पचास रुपये
प्रकाशक : ज्ञान गंगा, २०५-सी चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६
संस्करण : प्रथम, १९८९ / सर्वाधिकार : सुरक्षित / मुद्रक : रूपाभ प्रिंटर्स, दिल्ली-३२

ROMANCHAK SATYA KATHAIN
by Thakur Ghanshyam Narayan Singh
Rs. 50.00

अनुक्रम

जाली मुद्राएं

जाली मुद्राओं में आज नोटों का प्रचलन अत्यधिक है। इन नोटों ने, अपने जालीपन से, अनेक व्यक्ति तथा देश बर्बाद कर दिए हैं।

सन् १९०० के पश्चात्, विश्व का सबसे बड़ा जासूस सिसरो था। ग्रेट ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था को अस्तव्यस्त करना था। जर्मनी ने ९० लाख मॉर्क में उसे खरीद लिया।

सिसरो ने अपना काम समाप्त किया। परिश्रम में प्राप्त नोट अपने एअर बैग में रख, वह एअरपोर्ट पहुंचा। टैक्सी ड्राइवर को, उनमें से एक नोट उसने दिया। 'जाली है' कहकर टैक्सी-ड्राइवर ने नोट वापस कर दिया।

सिसरो के ९० लाख मॉर्क के नोट अपनी कीमत खो चुके थे। और सिसरो बर्बाद हो चुका था। पर जर्मनी अपना काम निकाल चुका था। द्वितीय विश्वयुद्ध, जापान की अर्थव्यवस्था को पंगु बनाना था। ब्रिटिश सरकार पर इसका उत्तरदायित्व था। फलस्वरूप करोड़ों रुपये के जाली जापानी नोट, भारत में छपवाकर, मलाया सिंगापुर, बर्मा, जावा, सुमात्रा आदि में पहुंचा दिये गये। जापान की अर्थव्यवस्था को क्षति पहुंची।

अमेरिकन स्वाधीनता संग्राम। अमेरिका में, जाली नोट भिजवाकर, अंग्रेजों ने वहां वित्तीय संकट खड़ा कर दिया।

फ्रांस को भी वित्तीय संकट का सामना करना पड़ा था।

सन् १९६८, भारतीय लोकसभा में जाली नोट की प्रथम गूंज से, तहलका मच गया। मद्रास की जनता का विश्वास, दो

और पांच के नोटों पर से उठ गया। विनिमय के कार्यों में, उनका वहां लेन-देन बंद हो चुका था। विवश हो, पुलिस को सक्रिय होना पड़ा। जाली नोट बनाने वालों को अन्ततः धर दबोचा। अपने अभियान में, पुलिस ने वाइकोयम्बटूर में, एक फैक्टरी मालिक के निवास-स्थान से एक करोड़ के जाली नोट जब्त किये थे।

तत्पश्चात्, उत्तर प्रदेश विधान सभा में जाली नोट प्रस्तुत किये गये। एक स्तब्धता वहां व्याप्त हो गई। रहस्योद्घाटन हुआ, पूर्वी उत्तर प्रदेश में, एक करोड़ के जाली नोट अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। सीमावर्ती बिहार में भी इनके अस्तित्व होने का समाचार मिला है।

सन् १९८२ में महाराष्ट्र-पुलिस को सुराग लगा। वह सक्रिय हुई। सौ-सौ रुपये के जाली नोट उसने पकड़े। मध्यप्रदेश में भी इनके प्रचलन का आभास मिला। अनेक गिरफ्तारियां हुईं। आयात किये गये, कागजों पर नोट छापे जाते हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि जाली नोट, छापने वालों की पहुंच बहुत गहरी है। सरकारी टकसाल में छपे नोट का आखिरी नंबर भी सम्भवतः उन्हें ज्ञात हो जाता है।

कानपुर में कथित जाली नोट के एक अनोखे कांड का पता अभी हाल ही में चला है।

'जाली नोट बनाने वाले असली सौ रुपया के नोट का टुकड़ा काटकर रख लेते थे। फटा शेष नोट रिजर्व बेंक में जमा कर उसके एवज में नया नोट बना लेते। इस प्रकार दस नोटों के अलग-अलग टुकड़े जोड़कर एक नया नोट बना लेते। इस विधि से उन्होंने चार लाख के जाली नोट चलाये थे।'

रिजर्व बेंक के कर्मचारियों को, सम्भवतः इसमें से कुछ प्राप्त होता था। अतः वे नोट बिना आनाकानी के चला देते थे।

ऐसे प्रचलन गंभीर खतरे की चेतावनी अवश्य देते हैं। पर, भारत में किसी ऐसे गंभीर वित्तीय संकट की अभी कोई संभावना नहीं है। फिर भी, राष्ट्रहित में, शासन का सचेष्ट रहना आवश्यक है। सचेष्ट रहने से, निर्धन तबका बरबादी से बच जायेगा।

हमारे आकाश के प्रहरी

भारत की स्वतंत्रता के पूर्व, अप्रैल, १९३३ में द्रिघ रोड, कराची पर, नम्बर एक स्क्वाड्रन की स्थापना हुई।

प्रथम कमांडिग ऑफिसर, फ्लाईट लेफ्टीनेंट, एअर वाईज मार्शल, सर सेसिल बैंचियर, डी० एफ० सी० थे।

रॉयल एअर फोर्स का, यह स्क्वाड्रन एक प्रसिद्ध यूनिट था। हरीश सरकार, सुब्रत मुखर्जी, ए० बी० एवान, अमरजीत सिंह, भूपेन्द्र सिंह, ऐस्पी इंजीनियर, डी० एफ० सी० जम्बो मजुमदार, डी० एफ० सी० पृथ्वीपाल सिंह, मेहरसिंह, डी० ए० ओ० एम० वी० सी०, अर्जुन सिंह, डी० एफ० सी० इसमें अपना-अपना योगदान दे चुके हैं।

इस स्क्वाड्रन ने, भारतीय वायुसेना कों, मुखर्जी, इंजीनियर अर्जुनसिंह और दिलबाग सिंह नामक चार वायुसेनाध्यक्ष प्रदान किये।

दिनांक १ अप्रैल, १९३६ को, इस स्क्वाड्रन को 'बोफ्लाइट' का गठन हुआ। अगस्त, १९३७ को यह स्क्वाड्रन सक्रिय हुआ।

मिरानशाह में, कबाइलियों से युद्ध छिड़ गया था। इस स्क्वाड्रन ने अपने चार जहाजों के साथ उस युद्ध में भाग लिया था। मुखर्जी, एवान, ऐस्पी इंजीनियर और नरेन्द्र, उक्त जहाजों के पायलेट थे।

१६ मार्च, १९३९ को, इस स्क्वाड्रन की कमान, फ्लाईट लेफ्टीनेंट एस० मुखर्जी ने संभाली।

जून, १६३६ को हावकार, हार्ट हवाई जहाज इसमें सम्मिलित किये गये।

मिरानशाह युद्ध से, स्क्वाड्रन नं० १ हटा लिया गया। स्क्वाड्रन नं० २८ इसके एवज में तैनात किया गया। वापित और वेरेक्स हवाई जहाजों ने भी इस युद्ध में सक्रिय भाग लिया।

स्क्वाड्रन लीडर (जम्बो) मजुमदार थे।

सितंबर, १६४१ इस स्क्वाड्रन का मुख्यालय, अंबाला कर दिया गया। लार्ड सैंडर हवाई जहाजों का भी उपयोग, इस स्क्वाड्रन में किया जाने लगा। ७ नवम्बर, १६४१ को बम्बई की जनता द्वारा, इस स्क्वाड्रन को १२ लार्ड सैंडर हवाई जहाजों की भेंट एक अनुपम भेंट थी।

१ फरवरी, १६४२ को यह स्क्वाड्रन टुंग (बर्मा) पहुंचा। उस पर निरन्तर प्रहार होने लगे। पर स्क्वाड्रन अपने हमले साहसपूर्वक करता रहा और फील्ड मार्शल केवल से बधाई प्राप्त करने का गौरव हासिल किया। स्क्वाड्रन कमाण्डर को 'डी० एस० सी०' से सम्मानित किया गया। ब्रिटिश काल के इतिहास में प्रथम बार एक भारतीय वायुसेना अधिकारी पुरस्कृत हुआ। ८ मार्च, १६४४ को इस स्क्वाड्रन ने, टिडिडम में, जापानियों पर आक्रमण किया।

जापानी सेना भयंकर रूप से युद्धग्रस्त थी। भारतीय सेना निरन्तर पीछे हट रही थी। अंग्रेज जनरल हतप्रभ थे। एकाएक सत्रहवीं भारतीय डिवीजन का सम्पर्क तोड़, उसे घेर लिया गया। इम्फाल से उसके बच निकलने की उम्मीद पर पानी फिर गया। स्क्वाड्रन सक्रिय हुआ। जापानियों की घेराबंदी टूट गई। डिवीजन सुरक्षित हो गया। १४ जापानी अधिकारी और २५० जापानी सैनिक वायु प्रहारों में मारे गये।

५ फरवरी, १६४४ से २५ मार्च, १६४७ तक यह स्क्वाड्रन,

चौदहवीं भारतीय डिवीजन की मदद करता रहा। समय-समय पर वह उसे सामरिक सूचनाएं और चित्र उपलब्ध कराता रहा।

पुर्त्तगाली सामंतवादी शक्तियां गोवा, दमन और द्‌यु पर से अपना प्रभुत्व हटाना नहीं चाहती थीं। स्वतंत्र भारत में उनका अस्तित्व हानिकारक था। अतः इन विदेशी क्रूर शिकंजों से समस्त द्वीप को मुक्त कराने का भार भारतीय वाहिनी ने वहन किया। इस स्क्वाड्रन ने उसे सहयोग प्रदान किया।

गोआ, दमन और द्‌यु मुक्त होकर अन्ततः भारतीय गणतंत्र के अंग बन गये।

स्क्वाड्रन लीडर एस० भट्टाचार्य कुशल नेतृत्व के लिए पुरस्कृत हुए।

भविष्य में इस स्क्वाड्रन को और न जाने कितना उत्तर-दायित्व वहन करना पड़े। पर, वह अन्य स्क्वाड्रनों के साथ भारतीय गगन का सजग और सतर्क प्रहरी है।

लोकप्रिय जुआ

जुआ दिवाली में खेला जाना शुभ माना जाता है।

(सनत्कुमार संहिता से)

माता पार्वती से पराजित हो, भगवान शिव अपना सर्वस्व परित्याग कर गंगा के किनारे चले गये। कार्त्तिकेय पिता के बचाव में आये। जुआ खेलना उन्होंने सीखा। माता पराजित हो गईं। भगवान का निर्वासन समाप्त हुआ। गणेश जी क्षुब्ध हो गए। कार्त्तिकेय को पराजित किया। माता की सम्पत्ति, उन्हें वापस कर दी गई। फिर, शर्त बदी गई। विष्णु पांसा बने। विष्णु शिव के पक्षधर थे। शिव के पक्ष में पांसे गिरते चले। पार्वती जी पराजित हुईं। शिव-पार्वती में समझौता हो गया।

तत्पश्चात्, पार्वती जी ने दिवाली पर जुआ खेलने का विधान किया। हड़प्पा सभ्यता के उत्खनन से, स्वर्ण के पांसे तथा जुआ पट्टा प्राप्त हुए।

भारत में जुआ प्राचीनतम है। युधिष्ठिर धर्मप्रिय थे। पत्नी द्रौपदी को भी वे हार गये।

राजा नल दमयंती का वन में, परित्याग कर भाग गये।

ऋग्वेद का दसवां मंडल, ३४वां सूक्त, दसों ऋचाएं जुए की हैं। उसी एक ऋचा के अनुसार,

पराजित की पत्नी का भोग, विजेता करता है।

रामायण में फल और पत्तेविहीन, अशोक वाटिका के वृक्षों की तुलना धन हार गए जुआरी से की जाती है।

प्राचीन भारत के पांसे, 'अक्ष' कहलाते थे। संख्या में वे पांच होते थे। शकुनि सदा विजयी दांव चलता था। उसमें दुर्लभ सिक्तता थी। पर, यह बेईमानी थी। जो जुआ में सामान्य है।

जातक में पुण्णक यक्ष की कथा है। वह मायावी था, माया से विरोधी के पांसे पलट देता था।

जुआ प्रचलित अवश्य है, पर समाज में उसकी प्रतिष्ठा नहीं है।

युधिष्ठिर के संबंध में भगवान कृष्ण ने कहा था—"मैं उपस्थित रहता तो युधिष्ठिर को जुआ नहीं खेलने देता।"

मनुस्मृति में भी जुए की निन्दा की गई है।

वात्स्यायन और कौटिल्य अर्थशास्त्र, जुए को राजाश्रित बताते हैं।

आज अमेरिका में ७० बिलियन डॉलर जुए में खेले जाते हैं। ब्रिटेन में ४८ प्रतिशत व्यक्तियों को इसका व्यसन है।

कीपलिंगर ट्रिक प्रसिद्ध है।

सन् १८८८, सेन फ्रांसिस्को में, कीपलिंगर ने अपनी आस्तीन में ऐसी सूक्ष्म व्यवस्था की थी कि बांह दबाते ही नकली पत्ते अंदर से निकल आते और वास्तविक जेब में चले जाते थे।

अमेरिकी जुआरी स्कारन ने, ताश या पांसे अपने पक्ष में उछालने की महारत हासिल कर ली थी।

जादूगर सरकार भी भारत में इसका प्रदर्शन कर चुके हैं।

रूसी उपन्यासकार दोस्ताएवस्की ने 'गैम्बलर' में जुआरी को भरपूर उभारा है। वह स्वयं एक प्रसिद्ध जुआरी था।

हिन्दी उपन्यासकार भी जुआरी का चित्रण मनोयोग से करते हैं।

इस प्रकार राजनीतिक साहित्यकार, धर्म के ठेकेदार, आदि-आदि में जुआ अतीत से लोकप्रिय रहा है।

चींटियां भी दूध पीती हैं

कहा जाता है भारत में दूध, घी की नदियां बहती थीं। यह मनुष्यों के लिए थीं। पर जीव-जन्तु भी इससे अछूते नहीं रहे।

भारत की वे गोपालक चींटियां हैं। अंग्रेजी में इन्हें, 'पालिरहेचिजसिप्लेक्स' कहते हैं। यह गौयें पालतीं, चरातीं और उनका दूध दुहती हैं।

अंग्रेजी में इन गौओं को 'मेम्बरासिड' कहा जाता है। यह ऐफिड कीट हैं।

चींटी अपनी संवेदनशील मूंछों से कीट-धेनु की पीठ को शनैः-शनैः ठोकती हैं। कीट आनंदित हो, मधुरस प्रदान करता है। बूंद के रूप में निकले हुए इस रस को चींटी पी जाती हैं।

इस प्रकार एक कीट २४ घंटों में २० बूंद रस प्रदान करता है।

उपरोक्त रस, कीट के उदर के पिछले भाग से निकले और कुछ ऊपर उठे हुए अंकुशों के द्वारा ही निकलता है।

कभी-कभी यह रस देना नहीं चाहते। विवश करने पर, यह दुलत्ती मारते और रस बेतरतीब बहा देते हैं।

उक्त कीटों में से प्रत्येक की लम्बे पम्प के समान बलिष्ठ चंचु होती है। इसके द्वारा यह वनस्पतियों से रस चूसते हैं।

थोमन नामक वैज्ञानिक ने, इनका अध्ययन कर निम्न क्रिया दृष्टिगोचर की—

"अपनी गायों को, रखने के लिए चींटियां अपने बिलों में ही,

विशेष विश्रामगृह बनाती हैं। यह सुरंगनुमा कक्ष होता है। जिसे कोमल घास के टुकड़ों से रेशम से गूंथकर बनाया जाता है।

इनके द्वार गोल होते हैं। इसमें चींटियां आसानी से प्रवेश करती हैं। गौओं के भागने की इनमें गुंजाइश नहीं रहती। उन तक जाने का मार्ग छायादार रहता है। धूप और वर्षा से, इस प्रकार, चींटियों और गौओं की रक्षा होती हैं।

अपनी गायों को चराने के लिये, चींटियां उन्हें बाहर निकालती हैं। चरवाहों की भांति वे उन्हें नियंत्रित करती हैं। अपनी मूंछों द्वारा चींटियां अपनी गौओं को निर्दिष्ट दिशा में चलने के लिए आदेशित करती हैं। किसी के इधर-उधर भटक जाने पर, अन्य चरवाहा चींटी उसे सही मार्ग पर लगा देती है।

यदि कोई इन गौओं पर अंगुली रख दे तो चरवाहा चींटियां उस अंगुली में काट खाती हैं। चलते-चलते गौएं यदि किसी झाड़ की टहनी के सिर पर पहुंच, गिरने लगती हैं तो चींटियां उसे पीछे की ओर खींच, गिरने से बचा लेती हैं। तत्पश्चात्, उन्हें घेर वापस ले आती हैं और उनकी पीठ थपथपा, एक के बाद दूसरी उनके दुग्ध का पान कर आनंदित होती हैं।

इस प्रकार चींटियां भी दूध पीती हैं।

सेनापति का बुद्धि-कौशल

लगभग २ हजार वर्ष पूर्व। समृद्धशाली ईरानी और रोमन साम्राज्य। विस्तृत राज्यों की सीमाएं एक-दूसरे से मिली थीं। सीमा पर, नसीबिन नामक एक नगर था।

नसीबिन की एकाधिकारिता का द्वंद्व, दोनों साम्राज्यों में चल पड़ा। वर्ष पर वर्ष व्यतीत हो गये।

नसीबिन का किला अपनी मजबूती पर कायम था। उसके चारों ओर ईंटों की तीन-तीन दिवारें बनी थीं। इसके अलावा चारों ओर गहरी खाई थी।

उसे पार कर, दिवारों को भेदना, उस जमाने में एक असंभव कार्य था। पर ईरानी सम्राट सपोर, उस पर कब्जा करना चाहते थे। उसे उन्होंने प्रतिष्ठा का विषय बना लिया। उन्होंने, एक लम्बी अवधि तक, उसकी घेराबन्दी तीन-तीन बार कराई। किन्तु उनके सेनानायक असफल रहे।

चौथा प्रयास फिर किया गया। आर्मेनिया प्रांत का बर्फ पिघलने लगा। ईरानी सेना हरकत में आई। क्षेत्र में, मिगडोनियस नदी प्रवाहित थी। ईरानी सेना ने उसे नगर के नीचे रोक दिया। और, दोनों तटों पर ऊंचे टीले बनाकर एक बनावटी झील का निर्माण करा दिया। किले की गहरी खाई में पानी भर गया।

ईरानी सैनिक जहाजों की मदद से दिवारों के समीप पहुंच गए। पर दिवारें अभेद्य रहीं।

ईरानी सेनापति विचलित हो उठा। जग-हंसाई से वह व्यथित था। विवशता थी। सेना को वापस लौटने का आदेश देने वाला ही था कि उसे एक अद्भुत तरकीब सूझी।

नगर के चारों ओर प्राणलेवा काले बिच्छुओं का साम्राज्य था। उसने मटके एकत्रित करवाये और अपने सैनिकों को उनमें काले बिच्छु भरने का निर्देश दिया।

सैनिकों ने आज्ञा का पालन किया।

सेनापति गहन रात्रि की प्रतीक्षा में था। उसका आगमन हुआ।

विपक्षी सैनिक मौत की बाजी लगाकर सो रहे थे। सैनिकों को मटके अन्दर फेंक देने का सेनापति ने आदेश दिया। आदेश का पालन हुआ।

प्राणलेवा बिच्छुओं ने अपनी करामात दिखाना आरम्भ कर दी। निद्रा में सोये विपक्षी सैनिक वेदना से पीड़ित हो जाग उठे। उनमें भगदड़ मच गई। किले के मुख्य द्वार पर एकत्रित हो बाहर निकलने के लिए वे अधीर हो उठे।

द्वारपाल को विवश हो मुख्य द्वार को खोलना पड़ा।

मुख्य द्वार खुलते ही, ईरानी सैनिक मारकाट करते हुए किले अन्दर घुस गए और किले पर अपना कब्जा जमा लिया। अन्ततः ईरानी सेनापति के बुद्धि-कौशल ने उसे विजयमाला पहनाई और, अयात उल्ला खुमैनी के समान ईरानी सम्राट की महत्वाकांक्षा पूर्ण हुई।

कीमती लाशें

वियतनाम का युद्धस्थल। अमेरिकी सेना की लाशों से युद्धस्थल अटा था। लाशों का अमेरिका भेजा जाना असंभव था। अमेरिका की एक अनाम मानव प्रेरित संस्था ने इसकी जिम्मेदारी वहन की।

अमेरिका को मुंह की मुराद मिली। वह प्रसन्न था।

मृत सैनिक को अमेरिका स्थित परिवार को पहुंचा दिया जाता। शोकग्रस्त परिवार को उसके दर्शन कराये जाते। सहानुभूति में संस्था उन्हें कुछ राशि भेंट करती और अपने व्यय से उसे दफना देती।

संस्था की यशोगाथा फैलती चली। एक दिन लाशों से लदा जहाज न्यूयार्क बंदरगाह पहुंचा और ड्यूटी पर तैनात कस्टम अधिकारी, श्रद्धांजलि अर्पित करने पहुंचा।

एकाएक एक लाश, जहाज से जमीन पर गिर पड़ी। लाश के ऊपर का कपड़ा हट गया। कस्टम अधिकारी चौंक पड़ा। लाश के पेट पर नश्तर था। उसे सन्देह हुआ। परीक्षण के लिए लाशें रुकवा दीं। परीक्षण हुआ। कस्टम अधिकारी का संदेह सत्य प्रमाणित हुआ। प्रत्येक लाश के पेट से प्लास्टिक के थैले में रखी अफीम निकली।

मादक द्रव्य चौर्यानयन का यह अद्‌भुत तरीका था। वे कीमती लाशें थीं, जिनके जरिये मानवतावादियों ने अरबों के वारे-न्यारे कर लिये थे।

लाशों से कमाई किया जाना आदिकाल से चला आ रहा है। इंग्लैण्ड में, उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मेडिकल कालेज में शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को लाश मुहैया कराये जाने की कोई कानूनी व्यवस्था नहीं थी। अतः मेरीलीस, एपून तथा मौबेट नामक तीन व्यक्तियों ने लाश चोरी करने की चालों के रूप में कीर्ति हासिल की।

अठारहवीं शताब्दी में, आयरलैण्ड का चार्ल्स विन जगते नामक एक दैत्याकार मानव डॉक्टर जान हंटर के कौतूहल का विषय बन गया।

जगते के शव का परीक्षण डॉक्टर हंटर करना चाहते थे।

जगते डॉक्टर हंटर की इच्छा से अवगत हुआ। सीसे के ताबूत में, समुद्रतट के सन्निकट अपनी लाश दफनाई जाने की अन्ततः उसने व्यवस्था कर ली।

सन् १७८५ में उसकी मृत्यू हो गई।

डॉक्टर हंटर ने रिश्वत का सहारा लिया। पांच सौ पौंड रिश्वत देकर उन्होंने लाश के रखवाले से जगते की लाश खरीद ली।

सन् १८१७ में, ठग बेलकाइच अपनी चरम कीर्ति पर था। कृत्रिम दांत लगाने की पद्धति का उस समय विकास नहीं हुआ था। असली दांत ही लगाये जाते थे। बेलकाइच युद्ध क्षेत्र में जाकर मृत सैनिकों के दांत उखाड़ लाता और उन्हें बेचकर पर्याप्त धनराशि प्राप्त कर लेता।

शहर एडिनबरी, लाशचोर बर्बं तथा हैगर, अनजाने और भोले-भाले राहगीरों को एकान्त में ले जाकर उनका गला घोंट मार डालने लगे और उनके दांत और लाश का वे अलग-अलग सौदा करने लगे। अंत तक वे पकड़े न जा सके।

इस तरह लाशों ने प्रमाणित कर दिया कि वे अमूल्य हैं और उनकी भी कीमत होती है।

अवध के वारिस

अवध गया, नवाब गये, नवाबी गई। पर, वसीका और सलीका कायम है और सम्भवत: रहेगा।

लगभग नवाब खानदान के तेरह सौ व्यक्ति वसीका पा रहे हैं। शहजादे आलम, हर महीने, हुसैनाबाद ट्रस्ट स्थित वसीका कार्यालय जाकर, दो रुपया साठ नये पैसे वसूल करते हैं। वे मुफलिसी में जरूर हैं, पर आदाबअर्ज का वही तरीका है, जो नवाब के जमाने में था।

वसीका के आठ मद हैं और वह हैं—अमानत, जमानत, बहू-बेगम, मिर्जा अलीखां का महल, सालारजंग महल, अवध लोन अव्वल, अवध लोन नम्बर तीन, अवध लोन नम्बर षष्ठम, तथा इसके अलावा अमानती नोट, इन्ट्रेस्ट वसीका भी मिलता है।

वसीका प्राप्त करने वाले, ४० हिन्दू, १५ ईसाई तथा शेष मुसलमान हैं। मुसलमानों में महिलाएं अधिक हैं। महिलाओं की शिनाख्त और सुरक्षा के लिये, उनके साथ एक महिला पहरेदार रहती है, जिसे 'महलदार' कहते हैं।

डेढ़ और दस रुपये के मध्य, लगभग ३०० वसीका पाते हैं। वसीका लेने वाले, मुंह में गिल्लौरी दबाये, सिर पर दुप्पली चढ़ाये, रिक्शे या टमटम पर आते हैं।

काश्मीरी मोहल्ला, सईद आलम का निवासस्थान। नवाब वाजिद अली शाह के जमाने के इतिहास का गवाह है। सईद

आलम नवाब सैयद हुजूर आलम के साहबजादे हैं। उस जमाने की उनके पास मसाले से बनी एक तस्तरी है। साहबजादे के कथनानुसार, नवाब वाजिद अली शाह उसमें खाना खाते थे। तश्तरी में यह खासियत है कि यदि भोजन में जहर मिला रहेगा तो वह टूट जायेगी।

उनके कथनानुसार, "एक राज्यपाल ने जहर रखकर परीक्षण किया। तश्तरी टूट गई। राज्यपाल ने, सात हजार रुपये मुआवजे के रूप में दिये, अब्बा हुजूर नवाब सैयद आलम के जमाने में आठ प्लेटें बिक गई। उनमें से दो, क्रिश्चियन महाविद्यालय के एक प्राचार्य ने खरीदी थीं। प्रत्येक का मूल्य उन्हें बीस-बीस हजार रुपया मिला था। एक-एक तश्तरी के निर्माण में दो-दो सौ वर्ष लगते थे। इस तश्तरो में कौन-कौन से मसाले प्रयुक्त होते थे, कैसे बनाई जाती थी और कौन बनाते थे, इसका ज्ञान नहीं है। वह सब लुप्त हो गया है।"

ईस्ट इंडिया कंपनी ने एक-एक घड़ी नवाब वाजिद अली शाह और नवाब रामपुर को भेंट में दी थी। नवाब वाजिद अली शाह को भेंट में दी गई घड़ी, सईद आलम साहब के पास धरोहर के रूप में थी। एक दिन घड़ी बिगड़ गई। उसे कलकत्ता के एक बड़े घड़ीसाज को दिखाया गया। उसने घड़ी को इंग्लैण्ड भेजने की सलाह दी। बाद में वह घड़ी किसी ने चुरा ली और सईद आलम साहब को जिन्दगी भर अफसोस करने का एक मुद्दा मिल गया।

काश्मीरी मोहल्ले में मिर्जा हुसैन अली खां विराजते हैं। उन्हें ८०० रु० प्रतिमाह वसीका मिलता है। एक जमाने में वह एक चौथाई तिरमनीगंज के मालिक थे। मिर्जा साहब के साथ एक नौकर चलता था। बाजार से यदि वह कुछ खरीदते तो नौकर उसे लेकर चलता था। जमाने की महंगाई ने नौकर हटवा दिया। अब मिर्जा साहब बाजार से यदि कुछ खरीदते हैं तो

दुकानदार से उसे अपनी जेब में ठूंस देने को कहते हैं।

मिर्जा चार लाख के जेवरातों के मालिक थे।

सन् १८८२ में, मिर्जा साहब खानदानी मुकदमेबाजी में फंस गये। जेवरातों ने अपनी राह ली। पर मिर्जा साहब आज भी खुशफहमी में मुब्तिला हैं। जेवरातों की कीमत अब एक करोड़ रुपया हो गई है। मिर्जा साहब को भरोसा है कि उनके जेवरात उन्हें वापस जरूर मिलेंगे। क्योंकि प्रीवि कौंसिल में उनका मुकदमा चल रहा है।

मिर्जा साहब प्रीवि कौंसिल से समन की प्रतीक्षा में अभी जीवित हैं। तो यह अवध के वारिस हैं।

अंतिम नशा—सफेद मौत

झंझावातों से उबरने या थकावट मिटाने के लिए, मनुष्य नशे का आलंबन लेता है। नशा शराब, गांजा, भांग, अफीम, कोकिन आदि को माना जाता था। पर मनुष्य उनसे त्रस्त हो गया और अन्तिम नशा तलाशने लगा। अन्ततः अन्तिम नशा उसे मिल गया। अन्तिम नशा हेरोइन के रूप में सामने आया। अन्य सब नशे ओट में हो गये।

हेरोइन का रासायनिक नाम 'डाईमार्फीन हाइड्रोक्लोराइड' है। इसके शुद्ध रूप में, मार्फिन हाइड्रोक्लोराइड का अंश और अत्यल्प रूप में, कोडीन की मिलावट होती है। यह अफीम से प्राप्त होता है जिसमें २३ प्रकार के अल्कालायड होते हैं। उपचार तथा मादकता की दृष्टि से, कोडीन और मार्फिन प्रमुख होते हैं। हेरोइन मार्फिन से निकलता है।

हेरोइन के दो-चार कश उसकी लत डाल देते हैं। नशेबाज इसके अधिक से अधिक सेवन के लिये आतुर हो जाता है। यह नशा शरीर को लुंज-पुंज कर देता है। नशेबाज की सहनशक्ति निरन्तर नशे से बढ़ती है और धीरे-धीरे उसकी नशे की मात्रा बढ़ती जाती है। इस प्रकार नशा या तो नशेबाज को पंगु बना देता है या उसकी इहलीला समाप्त कर देता है। इसलिए हेरोइन को सफेद मौत भी कहते हैं।

हेरोइन के अन्य नाम हैं—ब्राउन शुगर, स्मैक, ईरानी गर्द।

शुद्ध हेरोइन का रंग दूधिया सफेद होता है और यह रवेदार

रहता है। हेरोइन की मात्रा इसमें ६५% रहती है। यह अत्यन्त मूल्यवान है। इसकी मंडियां यूरोपीय देशों, विशेषत: अमेरिका, इंग्लैण्ड में हैं।

भारत जैसे तीसरे देशों में प्राप्त हेरोइन का रंग गुलाबी रहता है। कुछ-कुछ सफेदी और भुरभुरापन भी रहता है। इसमें कोडीन, पेप्टोज, एस्पिरिन के अलावा कैरामेल का भी मिश्रण रहता है।

हेरोइन सप्लाई करने वाले पहले सुनहले त्रिकोण कहलाते थे। अब 'गोल्डन क्रीसेंट' (सुनहले हिलाल) कहलाते हैं। आजकल पाकिस्तान और अफगानिस्तान के सरहदी इलाके इसमें मुख्य भूमिका अदा कर रहे हैं।

हेरोइन तैयार करने का धंधा मुख्यत: अफगान शरणार्थियों ने हाल ही में अपनाया है। विद्रोह का खर्च निकालने के बहाने शरणार्थियों के नेता द्वय हिकमतयार और शब्बानी ने पश्चिमोत्तर सरहदी सूबे में लगभग २० भूमिगत प्रयोगशालाएं खुलवा दी हैं।

पाकिस्तानी काश्तकारों को, पोस्ते की खेती करने को, अफगान शरणार्थी विवश करते हैं। ईरान के भगोड़े रसायन-शास्त्रियों की मदद से अफीम का वे शोधन करवाते हैं और 'सफेद मौत' को पाकिस्तान, तुर्की और इटली में बिकवाते हैं। पश्चिमोत्तरी सरहदी इलाके से कराची तक जाने वाली सड़क 'मौत की सड़क' कहलाने लगी है और इतने से क्षेत्र में ही लगभग दो लाख नशेबाज रहते हैं।

पाकिस्तान में 'सफेद मौत' तेजी से फैल रही है। हाल ही में, पेशावर में, पाकिस्तानी पुलिस ने ३९६ किलोग्राम 'सफेद मौत' जब्त की थी, जो पिछले तीन वर्षों में सर्वाधिक थी। पाकिस्तानी पुलिस सरहदी इलाके की कबायली पट्टी पर कारगर नियन्त्रण रखने में असफल है और चोटी के राजनीतिक अपनी-अपनी जेबों

को गरम करने में निरन्तर व्यस्त रहते हैं। यही कारण है कि पाकिस्तानी चुंगियों से हेरोइन आसानी से निकल आती है।

पाकिस्तानी समाचार-पत्र 'मुस्लिम' के अनुसार—"हेरोइन की तस्करी की कोशिश में, लंदन, पेरिस और एमस्टर्डम के कुछ पाकिस्तानी राजनयिक भी हिरासत में लिये जा चुके हैं।...

अफगान शरणार्थी अपार धनराशि अर्जित कर पाकिस्तान में जमीन और जायदाद खरीद रहे हैं। यदि उन्होंने रूस से समझौता कर लिया तो 'पख्तूनिस्तान' के निर्माण में अधिक विलंब न होगा।" यदि यह हो गया तो पाकिस्तान फिर से विभाजित हो जायेगा।

रूस और अमेरिका अपनी-अपनी चाल चल रहे हैं। देखना है, राजनीति किस करवट पलटती है और राजनीतिज्ञ अपनी गोटों को कहां फिट करता है।

प्रतीक्षा है नतीजे की। और सफेद मौत क्या गुल खिलाती है, देखना है। क्या अन्तिम नशा, अन्तिम पांसा फिंकवाकर पाकिस्तान के भाग्य का अन्तिम निर्णय करवा देगा ?

प्रश्न अनुत्तरित है।

इंग्लैण्ड में भी दिवार है

अभी तक हम चीन की दिवार के बारे में ही सुनते आये हैं। पर हमने इंग्लैण्ड की दिवार के बारे में अभी तक कुछ नहीं सुना।

इंग्लैण्ड में भी एक दिवार है। यह लगभग १२० किलोमीटर लम्बी है। ब्रिटेन के एकदम उत्तर में यह दिवार स्थित है।

सन् १२२ में,इंग्लैण्ड पर, रोमन सम्राट हैड्रियन की पताका फहराती थी।

हैड्रियन का विशाल रोमन साम्राज्य योरोप, अफ्रीका और फारस तक फैला था। पिक्ट्स नामक एक लड़ाकू जाति उस समय उत्तरी ब्रिटेन में निवास करती थी, उसका व्यवसाय लूटपाट करना था।

पिक्ट्स से हैड्रियन की जनता त्रस्त थी। सम्राट की विशाल वाहिनी, पिक्ट्स का बाल बांका न कर सकी। अतः दिवार का निर्माण हुआ। दिवार की ऊंचाई, लगभग २ मीटर ४५ सें० मी० है। इसकी चौड़ाई भी इतनी ही है। इस दिवार के साथ-साथ तीन दुर्ग बने हैं। इसमें कई बैरकें, घर और चर्च हैं। कहा जाता है कि सैनिक अफसर घरों में रहते थे। अत्यन्त ठंड पड़ने पर भी उक्त घर अन्दर से अत्यन्त गर्म रहते थे। सम्राट हैड्रियन के वक्त के इंजीनियरों की क्षमता का यह अद्भुत नमूना है। घरों के नीचे, जमीन में, उन्होंने भट्ठियां बनाई थीं, जिनसे गर्म हवा, घरों के अन्दर पहुंचती रहती थी। इसी तरह जल निकास की

भी उसमें उत्तम व्यवस्था है।

विश्व के पर्यटकों के लिये यह दिवार एक अजूबा है। प्रति-वर्ष, विश्व के कोने-कोने से लगभग २० लाख पर्यटक इसे देखने के लिये आते हैं। जिससे इंग्लैण्ड की विदेशी मुद्रा में इससे वृद्धि होती है।

ब्रिटेन की सरकार भी इस अनमोल आय के स्रोत को गंवाना नहीं चाहती। उसने तीस मिस्त्रियों को इसकी मरम्मत का कार्य सौंप रखा है। वे इसके निरन्तर प्रहरी हैं।

इंजीनियरों का मत है कि दो हजार वर्षों तक यह दिवार अपनी अक्षुण्णता बनाये रखेगी।

निश्चय ही, १८६० वर्ष पूर्व भी, इंजीनियर अपनी कला में बेजोड़ थे और इंग्लैण्ड की दिवार इसका उदाहरण है।

हिटलर की डायरियां

जर्मनी के तानाशाह हिटलर को विश्व के मानचित्र से लुप्त हुए, लगभग ३८ वर्ष हो गये। पर अभी भी, उसका व्यक्तित्व जिंदा है। विश्व उसके बारे में जानने को उत्सुक है।

हिटलर का जन्म २० अप्रैल, १८८६ को आस्ट्रिया में हुआ था। उसकी मां का नाम सिक्लिग्रवर था। उसकी माता के अवैध सम्बन्ध एडमिरल अलोइस से हो गये। एडमिरल अलोइस हिटलर के जन्म के उत्तरदायी हुए।

सैकेंडरी स्कूल तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद हिटलर ने दो वर्ष तक चित्रकला में दीक्षा ली। १६ वर्ष की आयु तक वह अपनी मां के आश्रित रहा। उसका खर्चा मां वहन करती रही।

विश्वविख्यात लेखक आर्थर कोगस्लर के शब्दों में—"हिटलर ने अनेक दरवाजे खटखटाये, पर वह ठुकरा दिया गया। उसके चित्रकला के पोस्टकार्ड बिके नहीं। उसे बीयर के स्थान पर दूध पीने की आदत थी। अतः बिल्डिंग-निर्माण विभाग द्वारा भी, वह भगा दिया गया…।

सन् १६१३ में हिटलर सेना में प्रवेश पाने में असफल रहा। उसे यहूदी कहीं जमने नहीं देते थे। उस समय हाउस्टन स्टेवार्ड और होविनियु नामक लेखक जर्मन जाति की सर्वोच्चता का प्रतिपादन करते थे। हिटलर उनसे प्रभावित हुआ। सत्ता में आने पर उसने साठ लाख यहूदियों का संहार किया…।

तत्कालीन ब्रिटेन के सर्वेसर्वा, विंस्टन चर्चिल को भी, हिटलर

यहूदी कहता था। उसके कथानुसार चर्चिल की मां, अमेरिका यहूदी जैरोमी की लड़की थी।

हिटलर शाकाहारी था। सिगरेट, शराब, चाय और कॉफी से वह दूर रहता था।

इसी व्यक्तित्व को, अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त जर्मन पत्रिका 'स्टर्न' ने १९८३ में उछाल दिया। स्टर्न के अनुसार हिटलर ने अपनी डायरियां सन् १९३२ में, सत्ता में आने से लेकर अप्रैल, १९४५ तक लिखी थीं। यह डायरियां, सौ-सौ पृष्ठों की, बारह इंच लंबी, आठ इंच चौड़ी और आधा इंच मोटी थीं। इसमें हिटलर की आत्मकथा 'मन काम्प' की शैली अपनाई गई थी। हिटलर को अपने हर कथन में हस्ताक्षर की आदत थी। इन डायरियों के हर पन्ने पर उसके हस्ताक्षर थे। इसके अलावा नामी गरुड़ और स्वास्तिक की सील भी इन पर थी। संक्षेप में, हिटलर की लेखन-शैली पर वे पूर्णतः आधारित थीं।

'हिटलर के अन्तिम दिन' नामक पुस्तक विश्वविख्यात लेखक, ब्रिटिश इतिहासकार ह्यूज ट्रेवर रोपर (अर्थलाईडेके) भी, इन डायरियों को सही मान गये। पर उन्होंने यह स्पष्टीकरण अवश्य मांगा कि यह स्पष्ट किया जाये कि उक्त डायरियां कहां से मिलीं ?

स्टर्न पत्रिका ने प्रत्युत्तर दिया—

"हिटलर ने यह डायरियां मरने से कुछ पूर्व स्टील कन्टेनर्स में, बर्लिन में, २१ अप्रैल, १९४५ को जहाज में अपने सचिव मार्टिन बोरमेन के हाथों सुरक्षित रखने भेजी थीं। पर वर्तमान पूर्वी जर्मनी का विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। वहां से इन डायरियों का बक्सा, एक किसान के हाथ पड़ा जिसे उसने अपने भूस में छिपा लिया। एक पत्रकार ने खोजकर उन्हें प्राप्त कर लिया।"

पर इतना सब होने के बावजूद हिटलर के वायुसेना सचिव निकोलस खानविला ने इन्हें सही मानने से इन्कार कर दिया।

हिटलर पर विशेषज्ञता प्राप्त बार्नर मैसर ने कहा—

"सन् १९४३ को हिटलर को नर्वस ब्रेक डाउन हो गया था। वह लिखने में असमर्थ था। फिर डायरियां वह कहां से लिखता।"

डायरियां विद्वानों में विवादग्रस्त हो गईं। अतः पश्चिमी जर्मनी सरकार के 'क्रिमिनल ऑफिस' ने इसके निरीक्षण का भार वहन किया। उन्होंने निम्न तथ्य उजागर किये—

(१) डायरियों की जिल्द में जो सैन्थेटिक मैटीरियल का प्रयोग किया गया है, वह सन् १९४५ के पहले आविष्कृत नहीं हुआ था।

(२) डायरियों में इस्तेमाल किया कागज सन् १९५५ के पश्चात् आविष्कृत हुआ।

इस प्रकार डायरियां नकली साबित हो गईं।

पर डायरियों के जन्मदाता, 'स्टर्न' पत्रिका, विश्व के पत्रों को इन डायरियों के सिडीकेशन के अधिकार पूर्व में बेच चुके थे। इससे प्रमाणित होता है कि हिटलर की डायरियों की जालसाजी महज, धनार्जन के उद्देश्य से की गई थी। हो सकता है, उसका उद्देश्य हिटलर के सहायक रूडाल्फ हैस को बचाना हो। रूडाल्फ हैस, १० मई, १९४१ में रूस के विरुद्ध जर्मनी और इंग्लैण्ड के मध्य संधि-वार्त्ता का प्रस्ताव लेकर स्काटलैण्ड में उतरा था। विंस्टन चर्चिल के आदेश पर उसे गिरफ्तार कर लिया गया। सन् १९५६ में न्युरम्बर्ग ट्रिब्युनल ने उसे मृत्युदण्ड प्रदान किया। पूर्वी जर्मनी के स्पान्दो बंदीगृह में, तब से वह नारकीय जीवन व्यतीत कर रहा है।

यह भी हो सकता है कि इन डायरियों के द्वारा हिटलर के व्यक्तित्व को शानदार और रहमदिल बता, विश्व के रंगमंच पर, फिर से लाने का प्रयास किया गया हो। संभवतः छद्मवेश में स्पेन के किसी अज्ञात नगर में, अज्ञात वास में रहते-रहते हिटलर त्रस्त हो गया हो। उसकी त्रस्तता का अन्त करने के लिये, हो सकता है, उसके अनुयायियों ने यह जाल रचा हो।

कुछ भी हो, हिटलर की डायरियों ने यह पूर्वाभास दे दिया कि हिटलर अभी तक जीवित है।

विदेशों में क्या नहीं होता

(१) खून में भी मिलावट होती है

लाहौर के किंग एडवर्ड कॉलेज के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉक्टर ताजपुर की रिपोर्ट पर, लाहौर की गवालमंडी पुलिस हरकत में आ गई।

प्रोफेसर को एक रोगी के लिये खून की आवश्यकता थी। रोगी का रिश्तेदार, गवालमंडी के एक क्लिनिक से खून की बोतल लाया। प्रोफेसर ने खून का रंग देखा। उन्हें शक हुआ। उन्होंने जांच कराई। जांच करने पर खून में आधा पानी निकला। विवश होकर प्रोफेसर को पुलिस को सूचना देनी पड़ी। पुलिस ने क्लीनिक वाले को गिरफ्तार कर उस पर मुकदमा दर्ज कर दिया।

दूसरी ओर क्लीनिक वाले का बयान है कि उसकी दुकान में मिलावट नहीं हुई। शक पर पुलिस ने उसके यहां बोतलें जब्त कर उनकी जांच करवाई। पर उनमें किसी प्रकार का मिश्रण नहीं मिला।

फिर लाने वाले पर शक किया गया। पर, उसके बारे में किसी को कुछ ज्ञान नहीं था। अतः उसकी गिरफ्तारी नहीं हो सकी।

(२) दुर्घटनाओं का कारण सुंदर स्त्रियां

कराची में दुर्घटनाओं के होने का सर्वेक्षण एक मानव-सेवी संस्था

ने कराया। सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि कराची में सबसे अधिक दुर्घटनाएं, नाजियाबाद के चौरंगी क्षेत्र में होती हैं। उस क्षेत्र में गर्ल्स स्कूल और कॉलेज की छात्राएं बसों के इंतजार में घंटों खड़ी रहती हैं। सुंदर लड़कियां और महिलाएं, ड्राइवरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं। गाड़ियों का कंट्रोल अव्यवस्थित हो जाता है और दुर्घटनाएं घट जाती हैं। सड़क या तो लाशों से पट जाती है या आपस में टकराने से वाहनों के छितराये टुकड़े चारों ओर फैल जाते हैं।

(३) गधे भी गिरफ्तार होते हैं

कराची के अंग्रेजी दैनिक 'डान' के अनुसार पाकिस्तान के उमरकोट कस्बे में आवारागर्दी के आरोप में, सौ से अधिक गधों को धारा ५५० के अन्तर्गत पुलिस ने हिरासत में ले लिया था। एक सप्ताह की पुलिस हिरासत के बाद उन्हें अदालत में पेश किया गया। अदालत में वकीलों ने गधों के पक्ष में पैरवी की। फलस्वरूप उन्हें जमानत पर रिहा करने का आदेश अदालत ने दिया।

जमानत देने के लिये जब कोई सामने नहीं आया तो अदालत के कुछ क्लर्कों ने जमानत देकर गधों को पुलिस के शिकंजे से मुक्त कराया।

(४) लंदन में हमें नहीं रहना है

इंग्लैण्ड की राजधानी लंदन में रहना लोग पसंद नहीं करते हैं। लंदन से मीलों दूर रहना उन्हें पसंद है। यद्यपि रोजाना उनके ४-५ घंटे आने-जाने में खराब होते हैं।

इसका कारण यह हैं कि लंदन विश्व का एक व्यस्त नगर है। यहां पर चलने वाले वाहन इतना अधिक धुआं छोड़ते हैं कि

वातावरण में प्रदूषण फैल जाता है। इस प्रदूषण से लगभग २० मील का क्षेत्र प्रभावित होता है। इस परिधि में उगी सब्जियां और अन्न स्वादरहित तथा रोगग्रस्त करने वाले होते हैं। अतः लोग लंदन में रहना नहीं चाहते हैं। लंदन से दूर रहने में ही वे अपनी भलाई मानते हैं।

भोपाल–मस्जिदों का शहर

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल है। पहले इसे 'भूपाल' कहा जाता था।

भोपाल का अस्तित्व, एक स्वतंत्र हिन्दू राज्य के रूप में, सातवीं सदी से माना गया है। वह युग सम्राट अशोक का युग था। तदनंतर मालवा के परमार इसके स्वामी हुए। सन् ८०० से १२०० तक उनका प्रभुत्व रहा। भोपाल के निकट बेतवा नदी पर एक पुल का निर्माण धार के परमार वंशीय राजा भोज ने किया था। बांध के पूर्वी तट पर शिव जी का मंदिर स्थित था। उसे 'उत्तर भारत का सोमनाथ' कहा जाता था। उसके अवशेष अभी भी दृष्टिगोचर होते हैं।

भोपाल के वयोवृद्ध समाज-सेवी वैद्यराज, पंडित उद्धवदास मेहता के शब्दों में—

"१५३९ से १५४५ तक शेरशाह सूरी के हाथ में भारत की बागडोर थी। उस समय भोपाल का राजा महेश्वर था। गोंड अपना प्रभुत्व निरंतर बढ़ा रहे थे। भोपाल उन्होंने विजित कर लिया और सन् १७०० तक उसके शासक रहे।

पिंडारियों का उस समय पूर्णतः पतन नहीं हुआ था। उनके संगठित गिरोह यहां-वहां लूटमार करते घूमते रहते थे। ऐसे ही एक गिरोह के सरदार दोस्त मुहम्मद की निगाह भोपाल पर पड़ी। उस समय भोपाल की शासिका रानी कमलापति थी। रानी कुछ राजकीय उलझनों में पड़ गई। दोस्त मुहम्मद ने

सहायता का हाथ बढ़ाया, और अनुकूल समय की प्रतीक्षा करने लगा। अनुकूल समय आते ही उसने भोपाल पर कब्जा कर लिया और सन् १७०८ से लेकर १९४९ तक भोपाल पर उसके वंशजों का आधिपत्य रहा। पर रानी कमलापति का खजाना वह पा न सका। कहा जाता है, रानी ने खजाने की तिजोरी का गुच्छा तालाब में फेंक दिया था। आज तक वह किसी को मिल न सका। तालाब में अन्य अमूल्य वस्तुएं भी दबी पड़ी हैं। इसी से प्रेरित हो एक विदेशी फर्म ने कुछ वर्ष पूर्व मध्यप्रदेश शासन से तालाब निःशुल्क साफ कर देने का निवेदन किया था। शर्त यह रखी गई कि तालाब से निकली कीचड़ का स्वामित्व उसका होगा। वार्त्ता, जो भी कारण हो, असफल रही।

मध्यप्रदेश एक पिछड़ा प्रदेश है। उसकी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये आवश्यक है कि कीचड़ से निकलने वाली वस्तुओं का आधे में समझौता कर लिया जाये। इससे प्रदेश को अरबों की राशि मुहैया होगी और तालाब का प्रदूषण हटेगा, सैकड़ों वर्ष तक वे भोपाल की जनता की सेवा कर सकेंगे और नर्मदा आदि से जल लाने के व्ययसाध्य कार्य पर बंधन लग जायेगा।

मेरा एक सुझाव मात्र है। मानना-न मानना राजनीतिक कर्णधारों पर निर्भर करता है। क्योंकि जनसेवा या अपव्यय के ऊपर हमेशा राजनीति हावी रहती है।

अंतिम शासक मुहम्मद हमीद उल्ला खां ने भारत की स्वतंत्रता के दो वर्ष पश्चात् भारत संघ में विलीनीकरण के हस्ताक्षर किये। इस प्रकार २४० वर्ष के मुस्लिम शासन का अंत हुआ। इन २४० वर्षों में शासकीय संरक्षण के अंतर्गत भोपाल में वास्तुकला के नाम पर केवल मस्जिदों का निर्माण हुआ। मंदिरों की भव्यता विलीन हो गयी।

सूर्योदय के समय, मस्जिदों के सोने के कलश चमक-चमककर भोपाल की १० झीलों में, इंद्रधनुषीय दृश्य प्रस्तुत करते हैं।

भोपाल रियासत का अपहरणकर्त्ता दोस्त मुहम्मद खां एक ऐयाश व्यक्ति था। उसका अधिकांश समय लड़कियों के बीच में व्यतीत होता था। सन् १७१९ में वह केवल फतेहगढ़ किले का निर्माण कर सका। इसमें आजकल हमीदिया अस्पताल तथा अन्य वार्ड्स हैं। इसके पीछे बड़ी झील के उत्तरी तट पर एक साधारण मस्जिद दोस्त मुहम्मद ने निर्मित करवाई। आज वह अवश्य विकसित हो चुकी है। पर पूर्व में एक साधारण मस्जिद मात्र थी। मुहम्मद मुअज्जम बिन मुहम्मद हफीज उस समय भोपाल रियासत के सबसे पहले काजी थे। उन्होंने पहली ईद की नमाज दोस्त मुहम्मद और उसके साथियों को पढ़वाई थी।

तो भोपाल की यह प्रथम मस्जिद थी।

भोपाल रियासत की बागडोर, बेगम शाहजहां के हाथ में सन् १८६८ से १९०१ तक रही। उसे एक दिन रात को खुदा ने आदेश दिया कि भोपाल में वह एशिया की सबसे बड़ी मस्जिद बनवाये। बेगम सक्रिय हो उठीं और वास्तुविद् अहलादिया ने उनके सपने को कागज पर उतारकर, सन् १८८७ में एशिया की सबसे बड़ी मस्जिद की नींव डाल दी। सन् १९०१ में बेगम जन्नतशीन हुईं। मस्जिद का कार्य ठप्प हो गया। कालान्तर में मुस्लिम जगत के धनाढ्य आगे आये और सन् १९७१ में फिर से मस्जिद निर्माण का कार्य आगे बढ़ा।

भोपाल के पुराने शहर के ठीक बीचोबीच जामा मस्जिद है। यह लगभग १०,००० वर्गफुट के क्षेत्र में है। मुगल स्थापत्य कला की यह भव्य कलाकृति है। सन् १८३२ में इसके निर्माण का कार्य बेगम कुदसिया ने आरंभ किया था और सन् १८५७ में ठीक गदर की शुरुआत पर पूर्ण हुई।

नवाब सुल्तान जहां बेगम पुस्तक 'हयते कुदसियां से'—

"जामा मस्जिद की जब नींव खोदी जा रही थी, तब उसमें एक शिलालेख मिला था, जिसमें लिखा था कि परमार राजा भोज के वंशज राजा विद्यादत्त की रानी शालमली ने नगर के किले के पास, यह मंदिर और सभा-मंडप, संवत् १२०८ (सन् ११५१) में बनवाना शुरू किया था। इसका निर्माण सोमवार, कार्तिक कृष्णा तीज, संवत् १२४१ (११८४) को पूर्ण हुआ। इस मंदिर में ५०० ब्राह्मणों को पूजा-अर्चना तथा चारों वेदों, शास्त्रों, १८ पुराणों के पठन-पाठन के लिये नियुक्त किया गया था।"

सुल्तान शम्सुद्दीन अल्तमस ने मालवा पर अनेक आक्रमण किये। सन् १२३६ को उसने उस भव्य मंदिर को नष्ट कर दिया। कालांतर में खंडहर बचे, जिन्हें साफ कराकर कुदसिया बेगम ने मस्जिद बनवा दी। प्रमाण मिलने पर निष्कर्ष निकाला गया कि नवाब बेगम की यह धर्मनिरपेक्षता नहीं थी।

लगभग ११० वर्ष पूर्व, भोपाल के पश्चिम में विंध्याचल की एक पहाड़ी शाखा पर भोपाल शहर की ईदगाह का निर्माण हुआ। बढ़ती मुस्लिम आबादी को दृष्टिगत रखते हुए नवाब शाहजहां बेगम ने उसका निर्माण करवाया था।

शहर की एक पुरानी मस्जिद ऐशबाग स्टेडियम के पास बाग फरहतअफजा में बनाई गई थी। यह लगभग १५० वर्ष पुरानी है।

भोपाल में अहमदाबाद है। वहां शाही महल हैं। वहां एक मीनार वाली सूफिया मस्जिद है। वह संगमरमर की बनी है।

गिन्नोरी में छोटी झील है। उसके उत्तरी तट पर मदारूल मुहाम की मस्जिद है। उसकी आंतरिक सुन्दरता मनमोहक है।

बुधवारा में अनूठी पत्थरों की जाली वाली कुलसुमबिया मस्जिद है।

बड़ी झील के अंदर बनी मस्जिद आबदारान आधुनिक स्थापत्य कला का सुंदरतम नमूना है।

जहांगीराबाद में एक मस्जिद है, जिसे 'आमवाली मस्जिद' इसलिए कहा जाता है, क्योंकि इसमें १०० वर्ष पुराना एक आम का वृक्ष है। वैसे यह 'बांसबहेड़ा' की मस्जिद है। यहां एक शिलालेख है, जो फारसी भाषा में है।

भोपाल के औद्योगिकीकरण से 'हैवी इलेक्ट्रिक्स' का निर्माण हुआ। उसके निर्माण के साथ ही दो मीनारों वाली एक पिपलानी वाली मस्जिद भी निर्मित हो गई।

आधुनिक स्थापत्य कला का सामंजस्य लाने का इसमें असफल प्रयास किया गया है।

भोपाल के नये शहर 'तात्या टोपे नगर' में भी एक मस्जिद बनकर खड़ी हो गई है। भोपाल फैलता जा रहा है। साथ ही मस्जिदें भी फैलती जायेंगी।

भोपाल में मंदिर नगण्य हैं और मेरे ख्याल से रहेंगे। क्योंकि मंदिर-निर्माताओं का धर्म से विश्वास उठ गया प्रतीत होता है। उन्हें एक भीषण झंझावात ही जागृत करने में सफल होगा। मुझे उसकी प्रतीक्षा है, जिससे मैं कुछ लिख सकूं।

पान—अमृत भी है और विष भी

पान के बारे में डाक्टर हैंडर्सन का मत है—

"पान की नोक में कामतत्त्व और तने में विष विराजमान हैं।"

सम्भवत: डॉक्टर हैंडर्सन ने कुछ ऐतिहासिक सामग्री पढ़ यह मत प्रदान किया हो। खैर, कुछ भी हो, भारत में उसे 'लबों की शान' कहा जाता है। पर पान प्रेम और घृणा दोनों का प्रतीक है।

सम्राट अकबर अपने दरबार में दो प्रकार के पानदान रखता था। एक में, मसालों से युक्त पान रहता था और दूसरे में विषयुक्त पान रहता था। प्रसन्न होने पर, अकबर मसालों वाला पान देता था और अप्रसन्न होने पर, विषयुक्त पान देता था। 'आइने अकबरी' में अबुल फजल ने पान के गुणों का सविस्तार विवरण दिया है।

भारत पर जब महमूद गजनवी ने आक्रमण किया तब उसकी सर्वप्रथम दृष्टि पान पर गई। अकेले कन्नौज में, उस समय पान की लगभग ३०,००० से अधिक दुकानें थीं। कहा जाता है, पान की लोकप्रियता से प्रभावित हो, गजनवी ने भारत में प्रथम बार पान चबाया था। वह उसे इतना स्वादिष्ट लगा कि उसे अपने साथ लेता गया और धीरे-धीरे पान मुस्लिम देशों में भी लोकप्रिय हो गया।

तेरहवीं शताब्दी में, इब्नबतूता भारत आया। उसने अपने संस्मरण में लिखा—"भारत में पान अत्यन्त लोकप्रिय है।

मेहमान को पान दिया जाता है और यह उसका सर्वश्रेष्ठ आदर माना जाता है। पांच पान दिये जाते हैं और वे असंख्य हीरे और मोतियों से भी बहुमूल्य माने जाते हैं।

अब हम भारतीय साहित्य में उल्लिखित प्रसंगों पर आते हैं—

(१) सम्राट उदयन, नागराज की कन्या से विवाह करने गया। उपहार में उसे गाय, शैया, रत्न और पान प्राप्त हुए।

(२) महाभारत में एक उल्लेख है जिसमें अर्जुन अपने पुत्र अभिमन्यु को पूर्ण पौरुषमय बताते हुए, पान भेंट करते हैं। अतः यहां पौरुष का प्रतीक पान हुआ। वह किसी को भी चुनौती प्रदान करने में सामर्थ्यवान है।

(३) चित्तौड़गढ़ में महाराणा प्रताप की सेना को चांदी के पात्र में मलमल में लिपटा, स्वर्ण-वर्क जुड़ा पान का बीड़ा भेंट किया गया था। वीर राजपूतों ने मुगलों के छक्के छुड़वा दिये थे।

भारत में वीरोचित कार्य की पूर्णाहुति के लिये आज भी बीड़ा उठाये जाने का रिवाज है। प्रसिद्ध डाकू गिरोहों में इसका प्रचलन है।

भारत में पान विवाह या अन्य उत्सवों में आदर प्रदान करने के उद्देश्य से मुक्त रूप से प्रदान किया और ग्रहण किया जाता है। प्रेमी और प्रेमिका, इसे दांतों में दबा, आधा-आधा काटकर प्रेम को अमरत्व प्रदान करते हैं।

पान को नाग बेल और संक्षेप में 'नागपल्लवी' कहा जाता है।

अमीरों-गरीबों में पान खाना एक व्यसन है। कहते हैं, इससे खाना शीघ्र पच जाता है। पान के व्यवसाय में हजारों लोग

अपनी जीविका अर्जित करते और उनके परिवार उस पर आश्रित हैं। पान उत्पादन क्षेत्र बरेज कहलाते हैं। पान अत्यन्त कोमल रहता है। अतः इसकी देखरेख अत्यन्त सावधानी से की जाती है। जरा-सी असावधानी से लाखों का नुकसान हो जाता है।

पान के कई प्रकार होते हैं, जैसे—बंगला, कपरी, मद्रासी, मघई आदि-आदि। कपूरी पान महाराष्ट्र में प्रचलित है। बंगला और मद्रासी सब ओर चलते हैं। मघई दुर्लभ है। रईस ही इसका सेवन कर सकते हैं।

बंगला पान पाकिस्तान में लोकप्रिय है। पाकिस्तान में पान का उत्पादन नहीं होता है। अतः बड़ी संख्या में भारत से उसकी तस्करी होती है। पान का एक बीड़ा, पाकिस्तान में एक से दो रुपया तक मिलता है।

इस तस्करी से हजारों परिवार अपना भोजन जुटाते हैं। सम्भवतः इसे दृष्टिगत रख शासन पान की तस्करी पर अंकुश नहीं लगा रहा है। यदि यह सत्य है तो स्तुति योग्य अवश्य है। पर पाकिस्तान शासन से यदि व्यापारिक समझौता कर लिया जाता है तो इससे और अधिक तबका लाभान्वित हो सकता है और शासन को भी लाभ मिल सकता है।

प्रतीक्षा है, ऐसे समझौते के घोषणा की।

विदूषक विश्व के

प्रत्येक राजदरबार में एक विदूषक रहता था। वह निरक्षर तथा गरीब तबके से आता था।

अकबर का बीरबल भी एक गरीब तबके से आया था। वह कालपी में पैदा हुआ था और उसका पूर्वनाम महेशदास था। अपने बुद्धि-कौशल से वह 'बीरबल' बना और सम्राट अकबर के दरबार के नवरत्नों में, एक रत्न माना गया।

दक्षिण में विजयनगर के राजा के यहां तेनालीराम था। वह हाजिर जवाब था और अपने बुद्धि-कौशल के बल पर वह राजा के खास दरबारियों में से एक था।

अठारहवीं शताब्दी में बंगाल के राजा महाराज कृष्णचंद्र थे। उनके दरबार में गोपाल भांड अत्यन्त लोकप्रिय था। वह नादिया जिले के एक अत्यन्त निर्धन परिवार का सदस्य था।

एक बार महाराजा के दरबार में, विदेशों से कुछ एलची आये। गोपाल भांड को उनकी राष्ट्रीयता बताने को कहा गया। गोपाल की यह अग्नि-परीक्षा थी। उसने एलचियों को एक लाइन में खड़ा हो जाने को कहा। लाइन में खड़े हो जाने पर उसने उन्हें धक्का देकर गिरा दिया। प्रत्येक अपनी-अपनी भाषा में गोपाल भांड को गाली देने लगा।

गोपाल भांड ने महाराज को इंगित करते हुए कहा, "राजन, जो जिस भाषा में मुझे गाली दे रहा है वह उसके राष्ट्र की भाषा है। और वही उसका राष्ट्र है।"

गोपाल भांड की बुद्धिमत्ता से महाराज प्रसन्न हो गये और उसे स्वर्ण-मुद्रा की एक थैली भेंट में दी।

रूस में खोजा नसरुद्दीन ने अत्यन्त लोकप्रियता हासिल की। वे अत्यन्त निर्धन परिवार से आये थे। पर उन्हें हंसते रहने और दूसरों को हंसाते रहने की आदत थी। एक दिन एक भिखारी एक भोजन-गृह से रोटी के कुछ टुकड़े लेकर, स्वादिष्ट भोजन के स्थान से गुजरा। भोजन-गृह का मालिक उसे रोककर उससे स्वादिष्ट भोजन के पैसे मांगने लगा। मालिक का कथन था कि चूंकि भिखारी स्वादिष्ट भोजन के पास से गुजरा है अतः उसके टुकड़े में भी भोजन की खुशबू समा गई और वे स्वादिष्ट हो गई हैं। वादविवाद ने गंभीर रूप धारण कर लिया और वहां भीड़ एकत्रित हो गई।

संयोगवश खोजा वहां से निकले। उन्होंने स्थिति का जायजा लिया और भोजन-गृह के मालिक के पास जाकर कान के पास सोने के सिक्के खनखनाने लगे। थोड़ी देर के बाद उन्होंने खनखनाना बंद कर दिया और उससे स्वर्ण के सिक्के मांगने लगे। भोजन-गृह का मालिक अचरज में पड़ गया। बोला, "आपने सोने के सिक्के मेरे कान के पास केवल खनखनाये ही तो हैं, मुझे दिये तो नहीं! फिर मैं उन्हें कैसे आपको वापस कर दूं।" प्रत्युत्तर में खोजा बोले, "इसी प्रकार जिस प्रकार तुमने भिखारी को स्वादिष्ट भोजन तो दिया नहीं, केवल सूखे टुकड़े दिये हैं। स्वादिष्ट भोजन के पास से वह गुजरा तो तुमने इल्जाम लगा दिया कि उनमें स्वादिष्ट भोजन की खुशबू समा गई और वे टुकड़े स्वादिष्ट भोजन के समान हो गये। अतः तुमने उससे स्वादिष्ट भोजन के पैसे मांगे।"

भीड़ ने खोजा का समर्थन किया। भोजन-गृह का मालिक लज्जित हो गया। उसने भिखारी को विवश हो सुस्वादु भोजन

कराया।

इसी प्रकार माईकिल जान नामक एक विदूषक, इंग्लैण्ड में, चार्ल्स प्रथम के दरबार में था। जर्मनी के सम्राट के राजदरबार में टिल स्पीगल था। वह हाजिरजवाब था। तेरहवीं शताब्दी में, चीन दरबार में, अवंति नामक विदूषक अपने चुटकले सुनाने में मशहूर था।

विजेता के रूप में नादिरशाह तख्ते ताऊस पर बैठा। जश्न की महफिल जमी थी। नाच-गाना हो रहा था। करेला भांड भी वहीं था। नादिरशाह का दिल नर्तकी झुम्मनबी पर मचल गया। उसने कटाक्ष किया, "यदि किसी हिन्दुस्तानी औरत से कोई विदेशी शादी कर ले तो औलाद कैसी होगी ?" करेला भांड ने कहा, "नादिर होगी।" नादिरशाह चुप्पी साध गया। नादिर का अर्थ वह जानता था। नादिर का अर्थ शानदार होता है।

राजा-रजवाड़े गये। लोकतंत्रवाद ने पदार्पण किया। फिर भी विदूषक वर्तमान रहे। मुझे एक लंगड़े अपंग पुलिस उच्चाधिकारी के बारे में मालूम है, जो कि अभी भी मध्य प्रदेश पुलिस सेवा में है। एक अधिकारी को इच्छानुसार स्थानान्तरण चाहिए था। लंगड़े अफसर ने कहा, "चलने में अब सुन्दरता नहीं रही है।" तपाक से इच्छुक अधिकारी बोला, "हुजूर की गलतफहमी है। हुजूर की मर्दाना चाल, तैमूरलंग को भी मात करती है।" लंगड़े उच्चाधिकारी प्रसन्न हो गए और इच्छुक अधिकारी का वांछित स्थानान्तरण हो गया।

अतः सृष्टि जब तक है, तब तक विदूषक रहेंगे। सृष्टि के अंत में संभवतः देवताओं को उनकी आवश्यकता पड़े। पर कहते हैं, अभी वहां नारदजी हैं।

वास्तविकता क्या है ? यह अज्ञात है, पर अवश्य कुछ है।

लंदन की वह ममी

मिस्र के पिरामिडों में ममियां सुरक्षित हैं। मानव के अमरत्व की वे साक्षी हैं। इंग्लैण्ड में भी पिरामिड हैं। वहां भी ममियां हैं। ऐसी ही एक ममी खुदाई में प्राप्त हुई। उसे धरोहर के रूप में, ब्रिटिश म्युजियम में रखा गया। वह ममी एक स्त्री की काया थी। मसालों तथा रसायनों से उसे सुरक्षित रखा गया। वह अत्यन्त वीभत्स थी। उसमें चुंबकीय आकर्षण था।

पुरातत्त्ववेत्ता आकर्षित हुए। खोज आरंभ हुई।

पता चला, वह स्त्री अथाह संपदा की स्वामिनी थी। धन और वैभव की उसके पास कमी नहीं थी। उसके पास सब पात्र स्वर्ण के थे। यह सन् १८६४ की बात है। वैभव ने उसके चरित्र का हनन कर दिया। वह दुराचारिणी हो गई। उसके हम-बिस्तरों ने उसे संपत्ति से वंचित कर दिया। वह विक्षिप्त हो गई। मौत ने अंत में उसे अपने आगोश में ले लिया। उसकी अंतिम वसीयत के अनुसार उसके शरीर को ममी में परिवर्तित कर दिया गया। लालसामयी का पार्थिव शरीर सुरक्षित हो गया।

वॉब सिसरो नामक एक धनाढ्य ममी की ओर आकर्षित हुआ। उसने वह ममी खरीद ली। परिणाम भयंकर हुए। उसे व्यापार में घाटा उठाना पड़ा। उसे सदमा पहुंचा। सदमे से उसकी मृत्यु हो गई।

ममी की देखरेख करने वाले उसके दो नौकर भी संशयास्पद परिस्थितियों में मरे पाये गए। ममी ने अपनी कार्यवाही फिर भी

बंद नहीं की। बॉब के पुत्र को उसने एक ट्रक दुर्घटना में लपेट लिया। फलस्वरूप दुर्घटना में वह अपनी टांगें गंवा बैठा। इन लगातार दुर्घटनाओं ने ममी को प्रचार के क्षेत्र में ला दिया। जनता उसके बारे में अतिरिक्त जानकारी हासिल करने को उत्सुक हो उठी। समाचार-पत्रों ने जनता की मांग पूरी करने के लिए सैक्सन नामक एक फोटोग्राफर को उसकी फोटो लेने भेज दिया। फोटोग्राफर ने फोटो लेने के पश्चात् जब उसे डेवलप किया तो उसमें एक अधेड़ वीभत्स स्त्री का चित्र निकला। फोटोग्राफर चित्र की वीभत्सता से घबरा उठा। सोते, उठते, बैठते उसे उक्त भयानक स्त्रीं का चेहरा ही दिखाई देता। लगातार इस दृश्य को आंखों के सामने देखते-देखते वह पागल हो गया और कुछ दिनों बाद मर गया।

इन लगातार दुर्घटनाओं से बॉब का परिवार भी विचलित हो उठा। उसने इन्हें दैवी प्रकोप मानने से इन्कार कर दिया। उक्त मौत के लिए उन्होंने ममी को ही उत्तरदायी ठहराया। एक क्षण भी वे उसे अपने पास रखने को तैयार नहीं थे। अतः उन्होंने दो मजदूरों के द्वारा ममी ब्रिटिश म्युजियम में वापस भिजवा दी।

ममी ने मजदूरों को भी नहीं बख्शा। उनमें से एक गंभीर रूप से घायल हो गया और अन्य दूसरा मर गया।

पुरुष ही, विशेषतः ममी के शिकार होते थे। सम्भवतः ममी को पुरुषों से घृणा थी।

शाजापुर का किला—अतीत की एक कहानी

सन् १६४० । दिल्ली के तख्त पर जहांगीर आसीन था।

शाहजहां महात्वाकांक्षी था। उसने विद्रोह कर दिया। उस समय वह दक्षिण प्रवास पर था।

शक्ति-संचय के लिए खुर्रम उचित स्थान ढूंढ़ने लगा। मालवा की मनोहारी पहाड़ियों, घाटियों के मध्य अवस्थित शाजापुर नगर उसे अनुकूल प्रतीत हुआ। नगर के चारों ओर घना जंगल और ऊंची-नीची टेकरियां थीं। इसके अलावा कलकल करती हुई चीलर नदी वहां बहती थी। सुविधा और रणनीति की दृष्टि से खुर्रम को स्थान पसंद आया। अतः सारंगपुर और मांडव की उपेक्षा कर, उसने अपनी सेना का पड़ाव वहां डाल दिया।

उधर दिल्ली में सम्राज्ञी नूरजहां षड्यंत्र का अपना जाल फैलाये बैठी थी। धीरे-धीरे उसने अपना जाल समेटना आरंभ किया। पर खुर्रम उसके जाल में फंस न सका। खुर्रम विजयी हुआ और सम्राट शाहजहां के नाम से दिल्ली के सिंहासन पर बैठा।

सम्राट शाहजहां का काल, वास्तुकला की दृष्टि से मध्यकालीन भारत का स्वर्ण युग माना जाता है। शाहजहां शाजापुर को नहीं भूला। इसके अलावा वह उसके सामरिक महत्त्व को भी जानता था। शाजापुर से दक्षिण और गुजरात पर, सक्षम रूप से नियंत्रण रखा जा सकता था। अतः शाहजहां ने उसके विकास पर विशेष ध्यान दिया। शाजापुर की जीर्ण-शीर्ण गढ़ी को साफ

करवाकर उसने एक मजबूत किले का निर्माण कराया। चीलर नदी के प्रवाह को मोड़कर किले की प्राचीर से सटा दिया और तभी से चीलर नदी किले की मजबूत प्राचीर की बगल से बह रही है।

शाहजहां ने इसका नामकरण 'शाहजहांपुर' किया। कालांतर में शाहजहांपुर 'शाजापुर' हो गया। और आज शाजापुर, मध्यप्रदेश का एक जिला है।

किले के परकोटे के अंदर जिलाधीश का कार्यालय है। इसके अतिरिक्त यहीं जिला न्यायालय, जिला कोषालय तथा अन्य कार्यालय हैं। पर इतना सब होते हुए भी किले के रख-रखाव के प्रति अधिकारी उदासीन हैं। चीलर के निरंतर बहाव से किले की प्राचीर की नीचे की दीवार कट रही है।

पुरातत्व विभाग का कर्त्तव्य है कि वह मुगलकालीन इस ऐतिहासिक दुर्ग की प्राचीर की मरम्मत का भार अपने ऊपर लेकर इसे ध्वंस होने से बचा ले।

देखें, मध्य प्रदेश का पुरातत्व विभाग कितना सक्रिय है।

स्त्रियों की सेना—महाभारत का एक पृष्ठ

उस समय यादव चरम उत्कर्ष पर थे। भगवान कृष्ण का उन्हें आशीर्वाद प्राप्त था। उग्रसेन गद्दी पर बैठे। उन्होंने अपने को सम्राट घोषित कर, अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ का अश्व विश्व-परिक्रमा के लिए निकला। यादवों की विशाल वाहिनी और कृष्ण पुत्र अनिरुद्ध उसके संरक्षक थे।

रुकावटों को आसानी से हटाते हुए वे आगे बढ़ते रहे। चलते-चलते वे उशीनर जनपद में पहुंचे। उशीनर में स्त्रियोंका राज्य था। सेना भी स्त्रियों की थी। वे अत्यंत दुर्दान्त थीं। उनकी रानी का नाम सरूपा था। वह अत्यन्त सुंदर और सर्वगुण-सम्पन्न महिला थी। उसमें समस्त राजोचित गुण थे। पर वह और उसके राज्य की स्त्रियां शापग्रस्त थीं। जिससे वे विवाह करतीं, उसकी मृत्यु एक वर्ष के अंदर हो जाती। अतः पुरुषों ने उस राज्य का परित्याग कर दिया। फलस्वरूप वहां स्त्रियों को पुरुषों से घृणा हो गई।

उशीनर जनपद में अश्व रोक लिया गया। सरूपा ने युद्ध का उद्घोष कर दिया। महिला सैन्य वाहिनी युद्ध के लिए तत्पर हो उठी।

युद्ध किसी भी क्षण हो सकता था। अनिरुद्ध धर्मसंकट में पड़ गए। स्त्रियों पर शस्त्र उठाना निषिद्ध था। वह वीरोचित कार्य नहीं था। विवश हो, अनिरुद्ध ने रानी से याचना की। अश्व को मुक्त करने और रानी तथा समस्त स्त्रियों को द्वारिका चलने की

उन्होंने प्रार्थना की।

उन्होंने रानी को आश्वासन दिया कि भगवान कृष्ण से वे निजी अनुरोध कर उन्हें शापमुक्त करा देंगे। तत्पश्चात् वे रानी से तथा अन्य यादव शेष स्त्रियों से विवाह कर लेंगे।

रानी शंकित थी। वह न मानी। विवश हो अनिरुद्ध को भगवान कृष्ण के पास संदेशा भेजना पड़ा—भगवान स्वयं पधारें।

श्रीकृष्ण आये। उन्होंने रानी और समस्त स्त्रियों को शापमुक्त किया और रानी का विवाह अपने पुत्र से कर, शेष स्त्रियों का विवाह अन्य यादवों से कर दिया।

द्रौपदी के समान सरूपा में भी तेज था। अतः भगवान को स्वयं आना पड़ा। तेजोमयो स्त्री क्या नहीं कर सकती।

विश्व के विविध वृक्ष

वृक्षों का समूह विश्व में विस्तृत है।

वृक्ष न हों तो हमें प्राणवायु न मिले। वर्षा न हो और हम पृथ्वी पर क्षण मात्र जीवित न रहें।

भारत में नीम का वृक्ष प्राणदायक माना गया है। पीपल और शमी वृक्षों की पूजा की जाती है। और भी अन्य प्रकार के वृक्ष होते हैं, जैसे बट, आम, बेर, जामुन, जाम आदि-आदि। प्रत्येक की मानव-सेवा में अपनी-अपनी तासीर हैं।

निस्संदेह, वृक्ष प्राणदेवा सिद्ध हुए हैं। पर प्रकृति के अनूठे खेल होते हैं। उसने कई ऐसे वृक्षों का भी सृजन किया है जो प्राण-लेवा होते हैं।

विलविटप्रिया नामक एक वृक्ष अफ्रीका में होता है। इसमें पहले फल और वाद में फूल आता है। अत: प्रक्रिया में यह अन्य वृक्षों से भिन्न है।

इस वृक्ष में पत्ते नहीं होते। केवल दो पत्तियों में वृक्ष अपना जीवन पूर्ण कर देता है।

अफ्रीका के वन्य प्रांतर में 'काले लीच' और 'लाबर्जुभेजा' अपना अलग-अलग स्थान रखते हैं। 'काले लीच' में यह खासियत है कि जैसे ही कोई जीवित प्राणी उसकी परिधि में आता है, उसकी शाखाएं उसको अपनी लपेट में लेती हैं और धीरे-धीरे उसे अपना आहार बना लेती हैं।

'लाबर्जुभेजा' नामक वृक्ष लोगों को ज्योतिहीन कर देता

है। जैसे ही मनुष्य की निगाह उस पर जाती है वह अपने नेत्रों की ज्योति खो बैठता है। यह पेड़ मैक्सिकों में भी बहुतायत में होता है। इसके शिकार जानवर भी होते हैं। यहां इस वृक्ष का शिकार सम्पूर्ण नगर है। उस नगर को 'टिल्टेपेक' कहते हैं।

इसके अतिरिक्त कुछ वृक्ष ऐसे भी हैं जो दूसरे वृक्षों को अपना स्थान देने के लिए आत्महत्या तक कर लेते हैं। अमेरिका के प्रोफेसर रोबिन बी० फोस्टर ऐसे वृक्ष का नाम 'टैचिगैलिया वार्सिकोलर' बताते हैं। यह वृक्ष एक वर्ष के अन्दर सूख जाता है और नया वृक्ष अपना अंकुर उसके स्थान पर फोड़ देता है।

कुछ वृक्ष ऐसे भी होते हैं जो गाय के समान दूध देते हैं। दूध पौष्टिक और मानव प्रयोग के लिए श्रेष्ठ माना गया है। ऐसे वृक्ष दक्षिणी अमेरिका के कार्डिलेरा क्षेत्र में पाये जाते हैं। इस वृक्ष में यह खूबी है कि सूख जाने के उपरान्त भी वह दूध देता रहता है।

कुछ वृक्ष ऐसे हैं जो मक्खन प्रदान करते हैं। इन वृक्षों से प्राप्त मक्खन मानवोपयोगी पाया गया है। ऐसे वृक्ष पश्चिमी अमेरिका के कुछ इलाकों में दृष्टिगत होते हैं।

जापान सूर्य का देश कहा जाता है। अतः वहां के कतिपय वृक्षों में भी कुछ न कुछ तासीर होना लाजिमी है। वहां एक ऐसा वृक्ष पाया जाता है जो सूर्यास्त के बाद धुआं छोड़ने लगता है। रुदन जैसा दृश्य प्रस्तुत हो जाता है। सम्भवतः वृक्ष नहीं चाहता कि जापान में कभी सूर्यास्त हो। जापानियों की राजभक्ति के बारे में हम बहुत कुछ सुन चुके हैं। पेड़-पौधों के बारे में अब सुन रहे हैं। लगता है, जापान की मिट्टी के कण-कण में राजभक्ति समाई है।

अंग-भंग होने पर वेदना होती है। मनुष्य चीत्कार करता है। वृक्ष, चुपचाप सब कुछ सहन कर लेते हैं। पर, आस्ट्रेलिया के सेब के वृक्ष अपवाद हैं। जब भी उस वृक्ष से सेब तोड़ा जाता है

तो उसमें कंपन होने लगता है। कंपन वेदना का प्रथम चरण है।

हाल ही में, चीन के हेनान प्रान्त में बारह सौ वर्ष पुराने पेड़ के तने पर चीनी पिस्ता, सरू तथा शहतूत के छोटे-छोटे पेड़ उगे पाये गए हैं। यह पेड़ एक मन्दिर में है। वनस्पतिशास्त्री इसकी आनुवंशिकता पर अध्ययन कर रहे हैं।

तो यह है, विश्व के कुछ वृक्षों की तासीरें।

युद्धस्थल का चुनाव

महाभारत का एक मार्मिक पृष्ठ

कौरव-पांडवों में युद्ध होना निश्चित हो गया। भगवान कृष्ण जनमानस को युद्ध की विभीषिका से प्रभावित करना नहीं चाहते थे।

भगवान का मानवता के प्रति यह उदार दृष्टिकोण था। भगवान मानवता के संरक्षक थे। अतः वे एक दूर-सुदूर, संवेदना-हीन स्थल की खोज में निकल पड़े। उनके साथ दुर्योधन और युधिष्ठिर भी थे। चलते-चलते वे एक पथरीली भूमि पर पहुंचे। उसके समीप एक खेत था। सूर्य का प्रखर प्रकाश अपने पूर्ण वेग पर था। चिलचिलाती धूप पड़ रही थी। खेत में एक व्यक्ति एक बैल की मदद से खेत जोत रहा था। खेत में एक ओर एक व्यक्ति चिलचिलाती धूप में चादर ओढ़े पड़ा था। भगवान की उत्सुकता जाग उठी। उन्होंने रथ रुकवा दिया।

रथ से वे उतर पड़े और हल चलाने वाले से पूछा, "एक बैल की मदद से तुम हल क्यों चला रहे हो और चिलचिलाती धूप में वह व्यक्ति कपड़ा ओढ़े क्यों सो रहा है?"

हल चलानेवाला बोला, "कपड़ा ओढ़े व्यक्ति सो नहीं रहा है। वह मर गया है। वह मेरा लड़का है। मेरे पास एक ही बैल था। सवेरे मैं उसे हल की दूसरी ओर जोतने लाया था। हल चलाते-चलाते वह मरकर गिर पड़ा। मैंने उसे हल से अलग कर दिया और एक ही बैल की मदद से खेत जोतने का कार्य पूर्ण करने

लगा। शाम को कार्य सम्पन्न कर, इसे कंधे पर उठाकर ले जाऊंगा और गांव वालों की मदद से उसका अन्तिम संस्कार कर दूंगा।"

हल वाले की बात सुनकर भगवान मुस्कुराये। रथ में पुनः आरूढ़ हो वे आगे बढ़े। मार्ग में उन्हें सिर पर टोकनी रखे एक स्त्री आती दिखाई दी।

भगवान ने रथ रुकवा दिया। स्त्री से पूछताछ की। जब उसने उसी खेत पर जाने की बात कही तो भगवान ने उससे कहा कि उसका पति मर गया है।

यह समाचार सुनते ही स्त्री ने सिर से टोकनी उतार ली और उसमें से रोटी निकालकर खाने लगी।

भगवान आश्चर्य में पड़ गये। उन्होंने उस स्त्री से पूछा, "भद्रे! दुखी होने के स्थान पर तुम रोटी क्यों खाने लगी?"

स्त्री बोली, "मरने वाले की मौत आई। वह मर गया। अब उसके बारे में दुखी होने में क्या धरा है। मैंने उसके हिस्से की रोटी इसलिए खा ली, क्योंकि यदि मैं नहीं खाती तो उन्हें मेरा ससुर खा जाता।"

इस हृदयहीनता पर युधिष्ठिर और दुर्योधन आश्चर्यचकित हो गये। पर भगवान मुस्कुराते रहे। उन्होंने युद्धस्थल के लिए उपयुक्त स्थान खोज निकाला था। वह वीरान था। वहां हृदयहीनता थी। संवेदना से वह शून्य था। वह कुरुक्षेत्र था।

'गांधी' और 'जिन्ना' फिल्में कितनी-कितनी लोकप्रिय

गांधी पर फिल्म बन चुकी है। उसने अपनी लोकप्रियता हासिल कर ली है। कायदे आजम पर फिलम बननी है। पर क्या वह लोकप्रियता हासिल कर सकेगी ?

जिन्ना धर्मनिरपेक्ष और उदारवादी थे। उनका इस्लामीकरण केवल राजनीति तक ही था। जिन्ना लोकतंत्र के हिमायती थे। जिन्ना स्त्री की स्वतंत्रता के हामी थे। कुरान और नमाज में उन्हें विश्वास नहीं था। वे खुले आम ह्विस्की पीते थे। सुअर के मांस के वे शौकीन थे। जिन्ना शिया थे।

जिन्ना सदैव सूटेड-बूटेड रहते और टाई पहनते थे। गांधी के समान ही जिन्ना काठियावाड़ में जन्मे थे। जिन्ना के बाबा द्वारा इस्लाम धर्म ग्रहण कर लेने से वे मुसलमान बन गए। अन्यथा गांधीजी की जाति ही उनकी जाति थी। जिन्ना ने मुस्लिम लीग की स्थापना की और अंग्रेजों से निरंतर मदद प्राप्त कर पाकिस्तान बनाने के मंसूबे में सफल हुए।

सुहरावर्दी को उन्होंने बंगाल में हिन्दुओं के कत्लेआम के लिए उकसाया था। सुहरावर्दी सन् १९४६ में अविभाजित बंगाल के मुख्यमंत्री थे। और तत्पश्चात् पाकिस्तान के प्रधानमंत्री बने।

गांधी और जिन्ना दोनों ने इंग्लैण्ड में शिक्षा प्राप्त की थी। और शिक्षा प्राप्त कर दोनों ने वकालत का पेशा अपनाया था। सन् १९३७ में उन्होंने कांग्रेस से असहयोग किया था। सत्ता में

साझीदार होना उन्होंने अस्वीकार कर दिया था और मजा चखाने को वे उत्कट हो चुके थे। गांधी, रेल की तीसरी और जिन्ना प्रथम श्रेणी में हमेशा यात्रा करते थे।

गांधी के समान जिन्ना की शादी भी बचपन में हो गई थी। कस्तूरबा ने, गांधी का साथ जीवन के संध्याकाल तक दिया। पर जिन्ना की पत्नी अमाई बाई उन्हें बीच में ही छोड़कर चल बसीं। एकांतवास से ऊबे जिन्ना ने ४१ वर्ष की आयु में अपने पारसी मित्र दीन शा की १७ वर्षीय कन्या रत्ना से चुपचाप विवाह कर लिया। जिन्ना का दाम्पत्य जीवन फिर भी सुखी न हो सका। पति और पत्नी में निरंतर झगड़े होते थे। २९ वर्ष पूर्ण कर रत्ना भी चल बसीं। उनकी बहन फातिमा उनके साथ अंत तक रहीं। कायदे आजम सितंबर, १९४८ को जन्नतनशीन हुए और फातिमा सन् १९६७ में इस संसार से विदा हुईं।

सन् १९६४ में उन्होंने जनरल अयूब के विरुद्ध चुनाव लड़ा था।

ऊपर कुछ तथ्य दिये हैं। गांधी और जिन्ना के व्यक्तित्व में काफी असमानताएं हैं।

तत्पश्चात, मार्शल प्रशासक जनरल जिया विशुद्ध इस्लामीकरण के कट्टर पक्षधर थे। जिन्ना और उनकी नीतियों में भी पर्याप्त विरोधाभास है।

जनरल जिया के आदेश पर 'कायदे आजम' पर ५२ मिनट की एक फिल्म बन रही है। इसी वर्ष दिसंबर को, उसके प्रदर्शन की घोषणा की गई है। यह फिल्म ६ भाषाओं में बनेगी। जो हैं: उर्दू, अरबी, फारसी, फ्रेंच, जापानी और अंग्रेजी। इसके निर्माण करने का उत्तरदायित्व इंग्लैण्ड की सिगनेट कारपोरेशन नामक एक फर्म को दिया गया है। पर घोषणा के बावजूद भी अभी तक कुछ नहीं हो सका है। और इस बीच जनरल जिया दुनिया से कूच

कर चुके हैं।

अमर शहीद जुल्फिकार अली भुट्टो अपने मार्ग पर चले गए। देखना है 'जिन्ना' की तथाकथित फिल्म का भुट्टो के समान क्या हश्र होता है? 'जिन्ना' फिल्म का हश्र कुछ भी हो, जनरल जिया का हश्र होता है।

भविष्य एक शून्य है। पर आज गांधी पर बनी फिल्म अपनी लोकप्रियता हासिल कर गई है।

रेगिस्तानी साम्राज्य—एक दिवास्वप्न

सन् १६०३ में बोनापार्ट जेकस नेपोलियन ने 'सम्राट' की उपाधि ग्रहण की। उसके पास अथाह संपत्ति थी। सहारा के मूर, तोरेग, तिब्बू, अरब आदि-आदि को शिक्षित करना और वीजा में राजधानी बनाना चाहता था। विशेषज्ञों की मदद से उसने सड़क, नहर, रेल-लाइन आदि के ब्लू प्रिन्ट तैयार करवा लिए।

सन् १६०३ में गरमी के दिनों में वह अफ्रीका की ओर चल पड़ा। केनरी द्वीप समूह के सामने उत्तर-पश्चिमी तट पर स्थित उसने १५० मील एक लंबी पट्टी चुनी। उस पर किसी का अधिकार नहीं था। फिर से वह फ्रांस आ गया।

कुछ काल के पश्चात् अपनी नौसेना और सशस्त्र सेना के साथ वह सहारा की ओर रवाना हुआ। उसकी अभिनेत्री रानी भी साथ थी। उसका नाम भगिरिता डोलियरे था। राजकुमारी जीक्वलीन भी साथ में थी।

कैप जूवी पर उनके जहाज रुके। जहाजों पर पांच नाविकों को छोड़, नैपोलियन अपने काफिले के साथ राजधानी की व्यवस्था करने चल पड़े। संध्याकाल को श्रांत हुए सम्राट अपने काफिले के साथ जहाज पर लौटे।

नाविक गायब थे। जंगली मूरों ने फिरौती के लिए उन्हें पकड़ लिया था। उन्हें मुक्त कराने में सम्राट असफल रहे। विवश हो फ्रांस से उन्हें गन-बोट बुलानी पड़ी।

अन्ततः नाविकों ने मुक्ति पाई। पर सम्राट की योजना पर मूरों ने पानी फेर दिया था। भय से उनके साथी आतंकित हो उठे थे। अतः विवशता में उन्हें अपनी योजना त्याग देनी पड़ी। सम्राट निरुत्साहित नहीं हुए।

उनके प्रति शेखों की वफादारी के लिए उन्होंने मोरक्को के सुल्तान के पास प्रस्ताव भेजा। इसके एवज में सम्राट ने सुल्तान को चार लाख पौंड दस प्रतिशत ब्याज की दर पर देने का प्रस्ताव रखा।

सुल्तान अफ्रीका में एक सुदृढ़ इस्लामी राज्य चाहता था। अपने दृष्टिकोण को संबल प्रदान करने के लिए सुल्तान ने एवज में शर्त रखी।

बातचीत चलती रही। और लंदन के कीमती होटल में सोने के सिंहासन पर बैठकर नेपोलियन प्रतिदिन दरबार लगाता रहा। व्यापारी अपना-अपना माल बेचने आते। महत्त्वपूर्ण व्यक्ति भी सम्राट को सलाम बजाने आते। रात-दिन होटल में चहल-पहल रहती।

होटल के कर्मचारी भी त्रस्त हो उठे। शनैः-शनैः सहारा रेगिस्तान साम्राज्य बन रहा था। वह वास्तविकता ग्रहण कर रहा था। इंग्लैण्ड, फ्रांस, स्पेन, मोरक्को में भगदड़ मच गई।

इंग्लैण्ड ने नेपोलियन को सहारा का सम्राट मानने से इन्कार कर दिया। सम्राट को धक्का लगा। उन्होंने अपनी योजना का परित्याग कर दिया। पर प्रथम विश्वयुद्ध में मित्र देशों की सहायता के लिए उन्होंने एक घुड़सवार सेना गठित की थी।

सन् १९१९ को उन्होंने अपनी पत्नी और पुत्री को गोली से उड़ा दिया। उस समय वे अमेरिका में थे।

न्याय-प्रक्रिया ने उन्हें नहीं बख्शा। उन पर बाकायदा

मुकदमा चला। पर 'आत्मरक्षा' के तर्क पर वे अदालत से मुक्त हो गए।

सम्राट क्लांत हो चुके थे। रेत के महल के समान उनका स्वप्न साकार होते-होते ढह गया था। वह उनका एक दिवा-स्वप्न था।

तंत्र और साधना

तंत्र भी होते हैं। साधना भी होती है। सम्मिलित रूप तंत्र-साधना होता है। तंत्र-साधना का अर्थ होता है—'ऐसी विद्या की आराधना करना, जिसकी आराधना से भोग तथा मोक्ष दोनों की प्राप्ति हो।' विद्या की आराधना में मंत्र प्रमुख होते हैं। मंत्र सर्वप्रथम गुरु-मुख से प्राप्त किये जाते हैं। तत्पश्चात्, गुरु के मार्ग-दर्शन में, एक निश्चित संख्या में उनका जप-हवन, तर्पण तथा मार्जन किया और ब्रह्मभोज दिया जाता है। न्यास और ध्यान भी आवश्यक है।

शुद्ध मन से यदि यह सब किया जाए तो साधक को मंत्र की सिद्धि हो जाया करती है।

स्वप्न में मंत्र से संबंधित देवता साधक को दर्शन दे देते हैं। साधक को मंत्र सिद्ध हो जाता है और मन को त्राण पहुंचता है। साधक में समस्त शक्तियां निहित रहती हैं।

दस देवियों की साधना, सिद्धि के लिए की जाती है। वे हैं—तारा, त्रिपुर-सुंदरी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, भैरवी, धूम्रावती, बगलामुखी, मातंगी और कमला।

प्राचीन काल में जनकल्याण के लिए ही मंत्र सिद्ध किये जाते थे। पर कालांतर में साधकों का एक वर्ग ऐसा आया, जो प्राप्त सिद्धि का दुरुपयोग करने लगा। अतः शिव कुपित हो उठे और उन्होंने अधिकांशतः मंत्रों को कीलित कर दिया। पर दसों देवियों के मंत्रों को उन्होंने कीलित नहीं किया। वे यथावत रहे

और उनकी शक्तियां यथावत रहीं। उन देवियों के मंत्र स्वयं-सिद्ध हैं और उनकी आराधना में किसी विशेष दिन, मास, पक्ष, आदि का ध्यान रखना आवश्यक नहीं है।

षट्कर्म विद्या द्वारा दूसरों के प्राण का हनन भी किया जा सकता है। अतः गुरु अपने शिष्य को कभी भी षट्कर्म की आज्ञा नहीं देता है। षट्कर्म में निहित हैं—शांति, आकर्षण, वशीकरण, उच्चाटन और मारण।

षट्कर्म की सिद्धि के लिए बगुलादेवी (बगलामुखी)आराध्या हैं। उन्हें पीतांबरा भी कहते हैं। इस सिद्धि से विभिन्न रोगों से छुटकारा, धन-प्राप्ति, ग्रहशांति, शत्रु-मर्दन और भयातम से, विपत्तियों से रक्षा होती है। इस सिद्धि से किसी भी महान से महान व्यक्ति की गद्दी छीनी जा सकती है। साधक और उसके परिवार की कभी अकाल मृत्यु नहीं होती है और किसी की भी अकाल मृत्यु टाली जा सकती है।

किसी-किसी शापित परिवार में संतानें पैदा होतीं और मरती जाती हैं। बगलामुखी के विधिवत् पूजन से संतानों का मरना बंद हो जाता है।

भगवती बगला सिद्ध विद्या हैं। इनके मंत्र का अनुष्ठान घन-घोर वन, पर्वत की चोटी, दो नदियों के संगम या शिवालय में किया जाता है।

बगुलादेवी अपने भक्तों की हमेशा शत्रुओं से रक्षा करती हैं। पर यह ध्यान में रखना चाहिए कि किसी भी प्रकार की मंत्र-सिद्धि केवल जन-कल्याण के लिए ही प्रयुक्त होना चाहिए। अन्यथा साधक की सिद्धि कुंठित हो जाती है और वह संबंधित देवी के प्रकोप का शिकार हो जाता है।

यही कारण है कि सिद्ध तांत्रिक हमेशा जन-संपर्क से अपने को अलग रखता है। छुटभैयों की बात अलग है।

आंधी और तूफान भी भयानक होते हैं

आंधी और तूफान अपना अर्थ स्वयं स्पष्ट कर देते हैं। वे भयानक होते हैं, इसमें संदेह नहीं है।

सबसे भयंकर हरिकेन तूफान होता है। इसकी गति २०० मील प्रति घंटा तक होती है। इसमें किसी भी स्थान पर २४ घंटे तक बने रहने की क्षमता है।

यह उष्ण-कटिबंधीय तूफान है और इसका उद्‌गम अफ्रीका के समीप का कैनेरी द्वीप-समूह माना जाता है। कहा जाता हैं यहां से आरंभ हो यह तूफान अटलांटिक पार कर पश्चिम की ओर बढ़ जाता है।

बहुधा यह अगस्त या सितंबर में सक्रिय होता है और अपने पीछे असीम धन-जनहानि छोड़ जाता है।

इससे मिलता-जुलता टाईफून तूफान होता है। पर वह केवल प्रशांत महासागर तक ही सीमित रहता है।

टार्नेडो बवंडर की गति ३००-३५० मील प्रति घंटा रहती है। इसके मार्ग में पड़ने वाली प्रत्येक वस्तु पूर्णतः विनष्ट हो जाती है। टार्नेडो का बादल स्वयं भयंकर काला होता है। उसे देख दिल में दहशत उठना लाजिमी है। यह बवंडर पहले धूल और मलबा उदरस्थ करता और तदनंतर दूसरी जगह उसे बरसा देता है।

बवंडर अपनी गतिशीलता से एक स्थान का सामान उड़ाकर मीलों दूर ले जाता है। एक चौथाई मील की परिधि में गतिशील

रहता है और आधे मिनट से अधिक एक स्थान पर नहीं रहता है।

समुद्र में इन्हें जल-बवंडर कहा जाता है। झंझावात में आंधी की गति धीमी होती है। यह अकसर आते रहते हैं। विश्व में प्रतिदिन ५०,००० से अधिक झंझावात आते हैं।

गर्मियों में भूमि और सर्दियों में समुद्र पर यह अधिकतर आते हैं। इन्हें अंधड़ भी कहते हैं।

बर्फानी तूफान अपने साथ बर्फ लाते हैं और चारों ओर इसकी वर्षा कर चले जाते हैं।

रेगिस्तानी इलाकों में रेगिस्तानी तूफान आते हैं। यह रेत को एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाकर कहीं-कहीं रेत के टीले खड़े कर देते हैं। ऊंट को ऐसे तूफानों का सामना करने की ईश्वर ने शक्ति प्रदान की है। और वह एक ऐसे स्थान में जमकर बैठ जाता है जहां तूफान का असर कम रहता है।

ऊंट सवार भी उसकी बुद्धि से ही स्वयं को जीवित रखते हैं और ऊंट से वह अपने को बांधे रखते हैं, जिससे खतरा देख ऊंट एकाएक भाग न खड़ा हो और उन्हें मृत्यु का आलिंगन करना पड़े।

तापमान के हिमांक से नीचे पहुंचने पर वर्षा की बूंदें ओलों में परिवर्तित हो जाती हैं और तूफानी गति से वे पृथ्वी पर आ जाती हैं। इन ओलों को बच्चे अक्सर बीन-बीनकर खाते देखे जा सकते हैं।

जार्जिया से लेकर कनाडा तक सन् १९७४ में वर्षा के साथ आंधी और तूफान आया। इससे १० अरब के लगभग सम्पत्ति को क्षति पहुंची और ६,००० के लगभग व्यक्ति या तो घायल हुए या मारे गए।

हाल ही में सन् १९८२ के ५ मिनट के तूफान ने मिसिसिपी

में अपने वेग से एक-एक चलती हुई मोटर को पेड़ पर आसीन कर दिया था और करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति को क्षति पहुंचाई थी।

इस प्रकार आंधी और तूफान भयानक होते हैं। और ध्वंस के रूप में अपनी रौद्रता का स्वरूप पृथ्वी पर छोड़ जाते हैं।

एक दक्षिणी विद्वान और उसका नारी-दर्शन

वह दक्षिणी विद्वान था। उसने हिन्दी की असीम सेवा की थी। उसने लगभग चालीस उपन्यासों की संरचना की थी। उसमें नारी-पात्र प्रमुख थे। और उनमें नारी-दर्शन था। वह व्यक्त था। वह दक्षिणी विद्वान डॉक्टर रांगेय राघव था।

श्री एन० रंगाचार्य और श्रीमती कनकम्भा के यह कनिष्ठ पुत्र थे। इनका जन्म १७ जनवरी, १९२३ में हुआ था। सन् १९४८ में उन्होंने 'गोरखनाथ और उनका युग' नामक एक शोध-ग्रंथ की रचना की और उन्हें पी-एच० डी० की उपाधि मिली।

नारी-दर्शन के उनके कुछ प्रसंग हैं—

१. उपन्यास, 'घरौंदा' पृष्ठ ६५

"स्त्री वही है, जिसको देखकर उसका प्रेमी विवश हो जाये।"

२. उपन्यास 'कब तक पुकारूं', पृष्ठ १९१

"स्त्री की बात पुरुष की मर्यादा को अगर लांघ नहीं पाती तो उसमें उथल-पुथल मचा देने की भारी शक्ति रखती है।"

३. उपन्यास 'कब तक पुकारूं', पृष्ठ ५७७

"स्त्री सब कुछ सह लेती है, लेकिन अपने और मायके के बारे में मजाक सुनना उसकी ताकत के बाहर होता है।"

४. उपन्यास 'पराया', पृष्ठ ८१

"स्त्री में एक दोष यह भी होता है कि वह सहज ही में दूसरी स्त्री पर विश्वास नहीं कर लेती है।"

५. उपन्यास 'लखिमा की आंखें', पृष्ठ ८७

"पुरुष की वासना उतनी जघन्य नहीं होती, जितनी स्त्री की। स्त्री अपनी वासना पर लज्जा का छद्म चढ़ाये रखती है और इसीलिये वह बहुत भयानक होता है। क्योंकि पुरुष कैसा भी छलिया हो, उसकी वासना सरल होती है, नारी की वासना की भांति गूढ़ और रहस्यमयी नहीं होती।"

६. उपन्यास 'राह न रुकी, पृष्ठ २६

"स्त्री का वह श्रृंगार तो अच्छा, जो पति के लिये हो, परंतु जिस स्त्री का श्रृंगार पति के लिये मर्मांतक वेदना बन जाये उस स्त्री का तो जीवन ही व्यर्थ है।"

७. उपन्यास 'सीधा-सादा रास्ता', पृष्ठ ३०३

"वहीं का सौभाग्य है, जहां वह रूखा-सूखा खाकर भी रहे अपने पति के साथ।"

८. उपन्यास 'मुर्दों का टीला', पृष्ठ २७०

"स्वार्थ स्त्री को तब घेरता है, जब उसे दाम्पत्य का सुख मिल जाता है।"

९. उपन्यास 'राह न रुकी', पृष्ठ १५३

"स्त्री पुरुष का भार है। अतः स्वामी बनकर भ्रम में पड़ता है और उसे दबाता है। और स्त्री छल से उसे दास बनाती है, अपने यौवन के बल पर।"

१०. उपन्यास 'पथ का पाप', पृष्ठ ११७

"पुरुष नींद को प्यार करता है और अपनी नींद में कोई बंटवारा नहीं चाहता। स्त्री चाहती है कि पुरुष उसका मनोरंजन करे तब अपनी नींद के अवसर के मुताबिक फिट कर ले। यह संघर्ष सनातन से चला आ रहा है। दिन समाज का है, इसलिये स्त्री चाहती है कि रात उसकी हो। और पुरुष पूछता है कि दोनों जगह जागूं तो सोऊं कब? स्त्री चाहती है, पति बोले उसे बहलाये, प्रेम जताये, पुरुष होता है यथार्थवादी। शादी हो गई, ठीक है, सब चलता है। स्त्री चाहती है, जो उसे शादी होते ही मिला था वह जीवन-भर मिले। लेकिन पुरुष की बुद्धि नये-नये मनोरंजन खोजती है।"

११. उपन्यास 'पराया', पृष्ठ ८०

"स्त्री अपने पति से प्राय: संसार में इतना अधिक प्यार करती है कि पुरुष उसकी सामर्थ्य को गहराइयों और ऊंचाई को कभी प्राप्त नहीं कर पाता है। स्त्री अपने पति की बुराई सुनकर चुप रह जाने का मुलाहजा तो स्वीकार ही नहीं करती है।"

१२. उपन्यास 'अंधेरे में जुगनू', पृष्ठ ४७

"प्रत्येक वयस्क स्त्री जो तरुणी से ईर्ष्या करती है, या डरती है, इसका कारण यही है कि वह तरुणी को अपने से अधिक सशक्त समझती है। सशक्त अपने में नहीं, अपने प्रभाव से पुरुष को पराजित करने की सामर्थ्य होने के कारण भी सशक्त, क्योंकि वह किसी समय यौवनरूपी खड्ग की धार पर नृत्य करके संसार को चकित कर चुकी होती है, इसलिये

उसे शक्ति का बहुत बड़ा ज्ञान होता है, पुरुष उसे नहीं जान पाता है।"

डॉक्टर राघव के उपन्यासों में, नारी-दर्शन के ऐसे अनेक उद्धरण भरे पड़े हैं। उनके विचार भारतीय दर्शन, सत्य के अत्यन्त निकट थे। इसीलिये उनके उपन्यासों में, नारी-दर्शन पात्रों का चित्रण भारतीय दर्शन के अनुरूप हुआ है। प्राचीन परंपरा का आधुनिक युग में जहां तर्कसंगत हो, वे उसका समर्थन करते थे। अतः किसी भी दर्शन का, अंधानुकरण उन्हें अमान्य था।

खेद है कि इस दणिक्षी.विद्वान की मृत्यु बुधवार, १२ सितंबर, १९६२ को कैंसर से हो गई। उनकी हिन्दी की सेवा चिरस्मरणीय रहेगी।

उनके निधन के पश्चात्, दक्षिण से, हिन्दी की सेवा करने वाला ऐसा कोई उपन्यासकार प्रकाश में नहीं आया जो, उनका स्थान ग्रहण कर सके।

हिन्दी क्षितिज में उसकी आतुरता से प्रतीक्षा है। नियति का चक्र निरंतर घूम रहा है। उसके क्षणिक 'रुकाव' से उसके 'आ जाने' की संभावना है। देखना है, 'रुकाव' कब होता है ?

प्राचीन सभ्यता का शहर—मोहेंजदरो

सभ्यताएं आती और चली जाती हैं। ऐसी अनेक सभ्यताएं आईं पर, अपने कुछ अवशेष छोड़ गईं। ऐसे ही कुछ अवशेष 'मोहेंजदरो' के हैं।

सिंधु-घाटी की यह सभ्यता आर्यों के आगमन से लुप्तप्राय हो गई। मेसोपोटेमिया और मिस्र से भी प्राचीन और विकसित यह सभ्यता थी। किन्तु आर्यों के युद्ध-कौशल के आगे यह टिक न सकी और सामूहिक रूप से पलायन कर गई।

कहां गई ? अज्ञात है।

करांची से लगभग ५०० किलोमीटर, उत्तर में मोहेंजदरों के अवशेष मिले हैं। पाकिस्तान पुरातत्व विभाग के निदेशक मुहम्मद इश्तियाक खां, इसका उतखनन करा रहे हैं। उन्हीं के शब्दों में, "यदि इनके रख-रखाव की समुचित व्यवस्था न की गई, तो पानी और हवा के सामने वे अधिक देर टिक न सकेंगे और दस वर्ष के अंदर नष्ट हो जायेंगे।"

इस प्राचीन सभ्यता की ओर यूनेस्को का सर्वप्रथम ध्यान गया। उसने प्राचीन सभ्यता में रुचि रखने वालों से २ करोड़ डॉलर दान में देने की अपील निकाली। खेद है कि अभी तक केवल १०० डालर मात्र ही प्राप्त हो सके हैं। दान एकत्रित करने के लिए एक गहन अभियान की आवश्यकता है, क्योंकि अपील एक कागजी घोड़ा मात्र रहती है।

लाहौर और मुल्तान के बीच पटरी बिछाने का कार्य, जोर-

शोर से चल रहा था। पटरियां बिछाते वक्त कुछ पत्थर निकाले गये। रेल के इंजीनियर उन पत्थरों के महत्व से अनभिज्ञ थे। एकाएक, गुलाम रसूल नामक एक प्राचीन वस्तुओं के विक्रेता की दृष्टि उन पत्थरों पर पड़ गई। उसने उनका अध्ययन किया और तत्कालीन शासन को, उनके महत्व से अवगत कराया। पुरातत्व विभाग सक्रिय हुआ।

कहा जाता है, मोहेंजदरों का बार-बार निर्माण हुआ और बार-बार वह विनष्ट हुआ। उत्खनन में उसकी सबसे ऊपरी परत निकाली गई है। पर उत्खनन करने वाले और ९ परत होने का दावा करते हैं। उत्खनन से उपलब्ध सामग्री से ज्ञात होता है कि वह ४,५०० वर्ष पुरानी है। अंदाज लगाया जाता है कि उस समय वहां की आबादी लगभग ६०,००० की होगी। वहां की सड़कों का निर्माण भी अद्‌भुत था। गरमी में वे ठंडी रहती थीं।

अलग-अलग वर्गों के लिये उसमें अलग-अलग हिस्से थे। मकान तिमंजिले थे। मकानों में शौचालय थे और कूड़े की निकासी की व्यवस्था उत्तम थी। साथ ही, गंदे पानी की निकासी, स्नानगृह, स्थापत्य और स्वच्छता में मोहेंजदरो अद्वितीय था। ख्याल किया जाता है कि सिन्धु घाटी की सभ्यता में लगभग ४७० शहर थे। मोहेंजदरो उनमें से एक था। अन्य शहरों के अवशेष, आशंका है सिन्धु नदी के किनारे दबे पड़े हैं। इन दबे हुए शहरों में एक शहर हड़प्पा भी है।

जैसाकि पूर्व में लिखा जा चुका है, मोहेंजदरो के निवासियों ने अपना शहर इसलिये परित्याग दिया, क्योंकि आर्यों का सामना वे न कर सके। यह संदेहास्पद है। उत्खनन में, गृह में, उपयोग में लाई जाने वाली कोई सामग्री अभी तक नहीं मिल सकी है। अतः यह भी सम्भव हैं कि जलवायु में परिवर्तन के कारण, वहां के

निवासियों ने, सामूहिक रूप से पलायन का मार्ग अपनाया हों। इसका समुचित उत्तर तभी मिल सकता है, जब समस्त परतों का उत्खनन संपूर्ण रूप से हो जाये।

यदि यह संपूर्ण हो जाता है तो सम्भव है, हमें सबसे प्राचीन संस्कृति के अवशेष मिलें। देखना है, वे कब मिलते हैं।

दया के सागर : पैगम्बर

अरब देश उस समय कबीलों में बंटा था। भेड़ें और ऊंट पालना, उन्हें चराना, उनका दूध और मांस खाना, खजूर की शराब पीना और औरतों के लिए नित्य मारकाट मचाना उनका दैनिक कार्य था। सभ्यता से वे कोसों दूर थे। वे जाहिल थे। उन्हें सभ्य बनाने के लिए अल्लाहताला ने हजरत मोहम्मद साहब को पैगम्बर बनाकर भेजा।

हजरत साहब ने 'इस्लाम धर्म' की नींव डाली। वह महज भाईचारे और मानवता पर आधारित एक धर्म की नींव थी। अरब देश में उनका विरोध हुआ। बालक, युवा, वृद्ध, अपने-अपने ढंग से उनका विरोध करने लगा।

हजरत प्रतिदिन एक मार्ग से जाते थे। मार्ग के बीच में एक वृद्धा का घर पड़ता था। वृद्धा प्रतिदिन अटारी पर कचरे की टोकरी लिए खड़ी रहती थी। ज्यों ही हजरत उसकी अटारी के नीचे आते थे, वह कचरा उनके सिर पर उंड़ेल देती थी। हजरत कुछ बोलते नहीं थे। वे मुस्कराते हुए निकल जाते थे।

एक दिन जब वे अटारी के नीचे से निकले तो उनके सिर पर न गिरा। हजरत को आश्चर्य हुआ।

दूसरे दिन भी जब ऐसा हुआ तो हजरत ने मोहल्ले वालों से पूछताछ की। ज्ञात हुआ, वृद्धा बीमार है। हजरत तत्काल वृद्धा के मकान में पहुंचे। उन्होंने वृद्धा को ज्वर से पीड़ित तड़पते पाया। हजरत तत्काल उसकी सेवा में जुट गए और उनके दैनिक कार्य

में वृद्धा की सेवा भी सम्मिलित हो गई।

एक दिन वृद्धा स्वस्थ हो गई। वृद्धा श्रद्धानत हो गई। मकान की दहलीज पर अब वह प्रतिदिन हजरत के लिए फलों की टोकरी लेकर खड़ी रहने लगी।

हजरत मुस्कुराते हुए उनका कुशल-क्षेम पूछते और टोकरी में से एक फल उठाकर शेष गरीबों में बांटने की हिदायत देकर आगे बढ़ जाते।

कालांतर में वृद्धा की मृत्यु हो गई। वृद्धा का जनाजा निकला। हजरत भी उसमें शरीक थे। कितने महान और दया के सागर थे, पैगम्बर हजरत मोहम्मद !

काश, यदि उनके अनुयायी, आज उनका जरा भी अनुकरण करें तो एशिया महान का नक्शा ही बदल जाएगा। भेदभाव-रहित एशिया एक सुदृढ़ एशिया हो जाएगा। पश्चिम का वह मोहताज नहीं रहेगा। ऐसा एक दिन होना अवश्यम्भावी है। पर कब और कितने बलिदानों के बाद ?

उस स्वर्ण दिन को देखने के लिए नेत्र लालायित हैं।

एक बोल्शेविक क्रांतिकारी की निर्मम हत्या

वह बोल्शेविक क्रांतिकारी था। जार के विरुद्ध उसने सशस्त्र सघन मोर्चा लिया था।

वह लियो ट्राटस्की था। रूस में एक साधारण किसान परिवार में वह सन् १८७९ में जन्मा था। सन् १९०५ की रूसी क्रांति में वह सम्मिलित हुआ था।

उसे साईबेरिया निर्वासित कर दिया गया था। वह वहां से भाग निकला। उसने अमेरिका में आश्रय लिया।

सन् १९११ में फिर से वह रूस लौट आया। अक्टूबर क्रांति का वह सफल नायक रहा। लाल सेना को संगठित कर २६ मोर्चों पर जार की सेनाओं का सफलतापूर्वक मुकाबला कर, उसने जारशाही को रूस से हमेशा-हमेशा के लिए विदा कर दिया।

क्रांति सफल होने पर लेनिन प्रधान हुए। ट्राटस्की सेना विभाग के प्रमुख बने और स्टालिन रूसी साम्यवादी दल के जनरल सेक्रेटरी के पद पर आसीन हुए।

स्टालिन और ट्राटस्की की निरन्तर लड़ाई चलती रही। सन् १९२३ में लेनिन ने अपना वसीयतनामा लिखवाया। वह एक सन्देश के रूप में था, जिसमें स्टालिन को समस्त पदों से वंचित कर देने का आह्वान था। मृत्यु के पश्चात् उसे प्रकाशित करने का उन्होंने आदेश दिया था।

२१ जनवरी, १९२४ को लेनिन स्वर्गवासी हुए। लेनिन की

मृत्यु के पश्चात् सोवियत प्रिसीडियम के समस्त सदस्य स्टालिन से मिल गए और स्टालिन प्रधान बन गए।

लेनिन का सन्देश उपेक्षित कर दिया गया। ट्राटस्की, अन्ततः पराजित हो गये। उन्हें भविष्य का खतरा दिख गया। अतः तुर्की, नार्वे और पेरिस होते हुए वे मैक्सिको (उत्तरी अमेरिका) भाग गये।

मैक्सिको वे सन् १९३७ में पहुंचे थे। मैक्सिको सरकार ने उनके निवेदन पर उन्हें शरण दे दी। वे मैक्सिको नगर के कोयाफेन नामक गांव में रहने लगे।

कुछ अज्ञात व्यक्ति उनकी हत्या के लिए सक्रिय हो गये। जैक मारेण्ड नामक एक व्यक्ति को उनकी हत्या का भार सौंपा गया। सिल्विया एजलोफ नामक एक सुन्दरी ट्राटस्की की विश्वासपात्र थी। दिसम्बर, १९३८ को वह पेरिस में छुट्टियां बिताने आई। जैक मारेण्ड ने उससे सम्पर्क बढ़ाया और उसका प्रेमी वन गया।

जैक मारेण्ड ने स्वयं को अमेरिकन प्रदर्शित किया था।

सिल्विया जैक मारेण्ड के साथ ट्राटस्की से मिली। मारेण्ड ने अपनी लुभावनी बातचीत से ट्राटस्की का विश्वास अर्जित कर लिया और ट्राटस्की के पास वह बेरोक-टोक आने-जाने लगा।

२४ मई, १९३९ जैक मारेण्ड ने ट्राटस्की का दरवाजा खटखटाया। उसके साथ ३० सशस्त्र व्यक्ति थे।

मारेण्ड की आवाज पहचान कर ट्राटस्की के सेक्रेटरी हार्ट ने दरवाजा खोला। सशस्त्र व्यक्ति अन्दर घुस पड़े। मारेण्ड बाहर खड़ा रहा। गड़बड़ी का आभास पाकर, ट्राटस्की और उसकी पत्नी ने तकियों के सहारे पलंग पर सोये हुए व्यक्तियों का आकार बनाया और चादर से उसे ढक पलंग के नीचे छिप गए।

हत्यारे झांसे में आ गए।

उन्होंने समझा पलंग पर ट्राटस्की और उनकी पत्नी सो रहे हैं। पलंग पर ३०० गोलियों की वर्षा कर हत्यारे भाग खड़े हुए। जाते-जाते वे ट्राटस्की के सेक्रेटरी हार्ट को भी लेते गए।

दूसरे दिन हार्ट की लाश एक गड्ढे में पड़ी मिली। चश्मदीद गवाह हार्ट मारा गया था। ट्राटस्की को यथार्थता से अवगत कराने वाला कोई नहीं बचा। मारेण्ड पर उन्हें सन्देह नहीं था। वह फिर से उनके घर आने-जाने लगा।

ट्राटस्की की हत्या के प्रयास को देखते हुए मैक्सिको सरकार ने उनके घर पर पहरा बिठा दिया।

एक सप्ताह बाद मैक्सिको से जैक मारेण्ड पेरिस लौट गया। जाली कनाडियन पासपोर्ट का इन्तजाम कर अगस्त, १९४० में जैक मारेण्ड, फ्रैंक जैक्शन का छद्म नाम धारण कर फिर मैक्सिको पहुंच गया।

२० अगस्त, १९४० को ढाई बजे वह ट्राटस्की से मिलने उनके घर गया और अवसर पाकर उन पर छूरे से आक्रमण कर दिया। ट्राटस्की ने बचाव का भरसक प्रयत्न किया; किन्तु फिर भी गंभीर रूप से घायल हो गए।

उनकी चीत्कार सुन उनकी पत्नी और पहरेदार दौड़े आए और जैक मारेण्ड को पकड़ लिया। ट्राटस्की को अस्पताल पहुंचाया गया, किन्तु वहां पर उन्होंने दम तोड़ दिया।

उस समय वे स्टालिन की नीति के विरोध में एक पुस्तक लिख रहे थे। उनका उद्देश्य स्टालिन की काली करतूतों का भंडाफोड़ करना था।

हत्यारे पर मुकदमा चला और उसे बीस वर्ष की कड़ी कैद की सजा दी गई।

जब ट्राटस्की पर हमला हो रहा था, हमलावर की मां बाहर मोटर लिए खड़ी थी। मोटर चालू थी। मारेण्ड भागने में

असफल रहा और भागने की उसकी योजना असफल हो गई। अदालत में जैक मारेण्ड ने ट्राटस्की पर आक्रमण का कारण यह बतलाया कि सिल्विया से वे उसका विवाह नहीं होने देना चाहते थे। अतः क्षुब्ध हो उसने उन पर आक्रमण कर दिया था।

जैक मारेण्ड ने कोर्ट में अपने को बेल्जियन नागरिक बतलाया था। पर यह गलत था। वास्तव में मारेण्ड की माता स्पेनिश और बाप क्यूबाई था। मारेण्ड की माता कैरेडिड कट्टर साम्य-वादी थी। स्पेनिश गृहयुद्ध में वह जनरल फ्रैंकों के खिलाफ लड़ी थी। कुछ प्रभावशाली रूसी एजेण्टों ने यह हत्या उसके पुत्र द्वारा करवाने के लिए उस पर प्रभाव डाला था।

ट्राटस्की की हत्या के बाद कैरेडिड को रूस द्वारा रूस का सर्वोच्च सम्मानसूचक लेनिन पदक प्रदान किया गया और उसके हत्यारे पुत्र जैक मारेण्ड को 'सोवियत संघ के हीरो' की उपाधि दी गई।

५६ वर्षीय जैक मारेण्ड की २० वर्षीय सजा की समाप्ति २० अगस्त, १९६० को होनी थी। किन्तु एक माह पूर्व वह जेल से मुक्त कर दिया गया। जेल में उसका जीवन विलासमय था। किसी अज्ञात स्रोत से उसे प्रति वर्ष ६,००० पौंड मिलते थे।

सन् १९५३ को किसी अज्ञात भय से उसने जेल से जमानत पर छूटने से इन्कार कर दिया था।

सन् १९६० को जेल से छूटने के बाद वह चेकोस्लोवाकिया चला गया उसका मुर्दा या जिन्दा रहने का अभी तक कोई प्रमाण नहीं मिला है।

देखना है, कब मिलता है। सम्भवतः अब तक वह यदि मारा नहीं गया है तो स्वाभाविक मौत मर गया होगा।

और तभी इस विवाद का अंत होगा

प्रभु यीशु मसीह के फिर से जी उठने के उल्लास में 'ईस्टर' का पर्व मनाया जाता है।

शुक्रवार को यीशु मसीह का प्राणांत 'क्रॉस' पर हो गया।

अरिमतियाह का उनका युसूफ नामक एक अमीर चेला हरकत में आया। जूठिया गवर्नर पेन्टियस पिलैट के पास जाकर उसमें अपने गुरु यीशु का शव मांग लिया। तदनंतर उसने उसे एक श्वेत चादर में लपेटा और एक खुदी कब्र में रखकर उस पर भारी-भरकम पत्थर लुढ़का दिया।

इधर यीशु के विरोधी भी सक्रिय हुए। उन्होंने हाकिम से मुलाकात कर, पत्थर पर राजा की सील लगवा दी। पिलातुस हाकिम से आज्ञा प्राप्त कर कब्र की देख-रेख के लिए पहरा बिठा दिया (मती—२७-६२-६४)।

इसराइल में प्रचलित रीति-रिवाज के अनुसार तीसरे दिन रविवार को मरियम मगदलीनी, योहन्ना और याकूब की माता मरियम तथा कुछ अन्य स्त्रियां फूल, इत्र आदि लेकर प्रातःकाल कब्र पर पहुंचीं।

वहां पहुंचने पर देखा कि पत्थर बाहर लुढ़का पड़ा है और कब्र से शव गायब है। उनके अचरज का अभी अंत भी नहीं हुआ था कि श्वेत वस्त्रधार ' दो सभ्य पुरुष उनके पास आकर खड़े हो गए।

वे भयभीत हो गईं। पर उन्होंने उन्हें ढाढ़स बंधाया और

समझाया कि वह तो जीवित हो गया और अपने चेलों से मिलने चला गया है।

यह खबर बिजली की तेजी के समान शहर में फैल गई (लुका—२४-१०-११)।

उनके विशिष्ट चेले थोमा तथा अन्य को यह बात अविश्वसनीय लगी। यीशु उनके संपर्क में आए और उन्हें अपने हाथों की हथेलियां दिखाईं। हथेलियों पर कीलों के निशान साफ दीख रहे थे।

दो व्यक्ति इम्माऊस गांव जा रहे थे। यीशु के बारे में ये बातचीत कर रहे थे। यीशु एकाएक प्रकट हुए और उनके साथ चलने लगे। उसने उन्हें नहीं पहचाना। अंत में जब वे गांव पहुंच गए तो उन्होंने उससे अपने घर में रात्रि व्यतीत करने का निवेदन किया।

रात्रि के भोज के समय जब यीशु ने प्रार्थना की तब उन्हें लगा कि अरे यह तो यीशु है। वे रोमांचित हो उठे और भागे-भागे यरुसलम गए।

यरुसलम से चेलों की एक भारी भीड़ आई और उन सबको दर्शन देने के बाद, यीशु खड़े-खड़े स्वर्ग चले गए (लूका—अध्याय २४, १३ से ३५ पद)।

कहा यह गया है कि तूरानी कफन में, यीशु का शव लपेट दिया गया था। मैक्सफ्री ने सर्वप्रथम इनका निरीक्षण कर, कफन पर पंद्रह प्रकार की बूटियां दृष्टिगोचर की थीं। उनमें से छह फिलिस्तान, एक कुस्तुन्तुनिया और आठ मध्यसागरीय प्रदेशों की थीं।

इस कथन का अध्ययन वैज्ञानिकों द्वारा वर्षों से किया जा रहा है। कफन पर रक्त के २८ छींटे हैं। वैज्ञानिकों का मत है कि जीवितावस्था में ही यीशु को दफना दिया गया था।

नवीं सदी से यह अध्ययन चल रहा है। प्रत्येक अध्ययन के पश्चात् चमत्कारिक तथ्य प्रस्तुत किये जा चुके हैं। सन् १८९२ में कफन सर्वप्रथम 'फोटोग्राफ' किया गया और उसके बाद तो फोटो खींचने का क्रम ही चल पड़ा। उसका अंत अभी तक नहीं हुआ है।

सर्वप्रथम यह कफन कुस्तुनतुनिया गया था। तत्पश्चात् बेल्जियम से होता हुआ वह तुरीन पहुंचा और सन् १७०६ से वहीं पर है।

विवश होकर वर्न ने 'वेटिकन' के पोप से निवेदन किया कि उक्त कफन का विधिवत अध्ययन किया जाए, जिससे कि इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि यीशु का प्राणांत सलीब पर नहीं हुआ था। यदि उनकी मृत्यु सलीब पर हुई होती तो कफन पर रक्त के छींटे नहीं होते। और इस निर्धारण के पश्चात् ही यीशु के पुनः जीवित होने के संबंध में स्पष्ट रूप से कुछ कहा जा सकेगा और तभी इस विवाद का अंत होगा।

जैक एंडरसन की प्रथम निराशा

पत्रकार-जगत में एक जानी-मानी हस्ती हैं। और वह जैक एंडरसन हैं। उनका संबंध 'वाशिंगटन-पोस्ट' से है। विश्व-विख्यात हस्तियों को उन्होंने निराश किया है। पर, अपने जीवन में एक प्रसंग में वह भी निराश हो चुके हैं।

पेरिस (अकानमास) में जोन जोन्स रहती थी। विलाप में भी वह हंसती थी। वह मुस्कराती थी और उसके जानने वाले, उसके व्यक्तित्व को मुस्कानयुक्त बतलाते थे।

उसके तीन बच्चे थे। वह उस पर निर्भर थे। उनका पालन-पोषण उसे करना पड़ता था। उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने एक होटल खोल लिया। पर दुर्भाग्य उसके पीछे हाथ धोकर पड़ गया। उसके २२ वर्षीय पुत्र की सर्जरी द्वारा एक टांग अलग कर दी गई। पुत्र की चिकित्सा में उनका होटल बिक गया। पर पुत्र के जीवन के उपलक्ष्य में अर्थाभाव उसने मुस्कराते हुए सहा।

दुर्भाग्य अभी भी पीछे पड़ा था। उसका घर जल गया। वह निराश्रित हो गई। फिर भी वह मुस्कराती रही!

वह दिन था और उस दिन तापमान शून्य था। पर उस दिन उसे एक जगह टेलीफोन करना आवश्यक था। सड़क बर्फ से जमी थी। सड़क के उस पार टेलीफोन-बूथ था। बर्फ से ढकी सड़क पार कर वह टेलीफोन बूथ पर पहुंची। बूथ के आसपास देवदार के वृक्ष लगे थे। जमीन पर पड़ती देवदार वृक्षों की छायाओं की ओर एकाएक उसका ध्यान गया। उसने चार व्यक्तियों को वहां

ठंड से सिकुड़ते पड़े देखा। टेलीफोन करना वह भूल गई। वह उनके पास जा पहुंची।

उसने उनकी वेशभूषा से उन्हें पहचाना। वे मैक्सिकोवासी थे। जोन्स उनकी भाषा से अनभिज्ञ थी और वह भी उनकी भाषा से अनभिज्ञ थे। जोन्स ने इशारों का सहारा लिया। इशारों द्वारा उसे ज्ञात हुआ कि वह मैक्सिको वापस जाना चाहते हैं। पर पैसे, अन्न और गरम कपड़ों का उनके पास अभाव है।

जोन्स उनकी हालत जानकर व्यथित हो उठी। वह उन्हें अपने घर ले आई। अपने अभाव का ख्याल न करते हुए उसने उन्हें अपने दो कंबल और अपने अपंग पुत्र का कोट दे दिया।

लेटर-डे-सेन्ट्स चर्च में दूसरे दिन शाम को प्रार्थना होने वाली थी। उसके निवास से चर्च ६५ मील के फासले पर था। उसने उनके मार्ग-व्यय के लिए पैसे एकत्रित किये और उन्हें चर्च ले गई। चर्च में उसने पूरे हालात बयान किये। चर्च में उपस्थित जनसमूह ने भी तत्काल सहानुभूति प्रदर्शित कर उनके लिए गरम कपड़ों, रास्ते के व्यय और डलास के लिए चार टिकटों का इंतजाम कर दिया।

जोन्स एक विधवा थी और एक विधवा का यह योगदान था। पर जोन्स का यह मानवीय कार्य छिपा न रहा। उसने व्यापक रूप लिया और वह बहुचर्चित हो गई। और अब उसकी यशोगाथा फैल चुकी थी।

प्रसारित होते-होते वह जैक एंडरसन तक पहुंची। उसे उन्होंने सुना। सुनकर उनमें सोया पत्रकार जाग उठा। वह अपने को रोक न सके और कई आवश्यक 'इन्गेजमेन्ट्स' छोड़कर जोन्स से मिलने वह उसके घर पहुंच गए।

जैक एंडरसन से वह मित्रतापूर्वक मिली। उन्होंने उससे कई सवालात किये। पर उन सवालों का उत्तर देने से इन्कार करते

हुए उसने कहा, "दानशीलता गुप्त रखनी चाहिए। और फिर उसने कोई अनहोना कृत्य तो नहीं किया। और अन्य भी ऐसा करते हैं।"

उसकी स्पष्टवादिता से जैक एंडरसन हतप्रभ हो गए। उनकी जिज्ञासु पत्रकारिता शांत हो गई और निराशा से मुंह लटकाये, अपने गंतव्य की ओर वह वापस लौट पड़े।

पत्रकारिता के क्षेत्र में सम्भवतः जैक एंडरसन की यह प्रथम निराशा थी।

विश्व के सफल भविष्यवक्ता

सन् १९३६ में वह परलोकवासी हुआ। विश्व का वह सफल भविष्यवक्ता था।

पच्चीस वर्ष के जीवन-काल में वह निरंतर भविष्यवाणियां ही भविष्यवाणियां करता रहा। एक अरसा पूर्व ही वह अपनी मृत्यु का दिनांक, माह और वर्ष घोषित कर चुका था। लंदन का वह कीरो (Cheiro) था।

लॉर्ड किचनर ने उसकी ख्याति सुनी। उन्होंने उसे आमंत्रित किया। वह गया। लॉर्ड ने उसे अपनी हथेली दिखाई। हथेली देखते ही वह बोल उठा—उनकी मत्यु पानी में डूबने से होगी। लॉर्ड ने हंसी में बात उड़ा दी। पर कालचक्र घूमता रहा। सन् १९१६ में प्रथम विश्व-युद्ध अपनी चरम सीमा पर था। लॉर्ड को कार्यवश रूस जाना पड़ा। पानी के जहाज से वे गए। जर्मन पन-डुब्बी ने मार्ग में उस जहाज को डुबो दिया। लॉर्ड किचनर भी जहाज के साथ डूब गए।

सम्राट सप्तम एडवर्ड ने कीरो की कीर्ति सुनी। उसे उन्होंने आमंत्रित किया। कीरो गया। सम्राट ने अपनी हथेली दिखाई। उसने उनकी मृत्यु ६९ वर्ष की आयु में बतलाई और यह भी बताया कि उनका पुत्र किसी के प्रेम-पाश में इस तरह फंसेगा कि वह राजसिंहासन भी ठुकरा देगा।

कालांतर में उसकी दोनों भविष्यवाणियां सत्य प्रमाणित हुईं।

जनश्रुति के अनुसार, कीरो को डायना की प्रेतात्मा सिद्ध थी। पर ज्योतिष तथा हस्त-रेखा विशेषज्ञ डॉक्टर रश्मिकांत व्यास, भारती भवन, उज्जैन (म० प्र०) इसका खंडन करते हुए कहते हैं, "कीरो को कोई सिद्धि नहीं थी। उसका 'इन्ट्यूशन' (अन्तर्ज्ञान) पूर्ण विकसित था। अन्तर्चेतन मन के विकास से वह त्रिकालज्ञ था।"

भारत में मेरा परिचय पंडित सूर्यनारायण व्यास 'पद्मभूषण' से था। भारती भवन, उज्जैन (म० प्र०) में वह निवास करते थे। एक सफल भविष्यवक्ता के रूप में मैंने उनका आकलन किया।

प्रामाणिकता में कुछ दृष्टांत निम्नलिखित हैं—

(१) मेरा व्यक्तिगत अनुभव—मेरे अल्पायु कनिष्ठ पुत्र की बिच्छू काटने से मृत्यु हो गई। मैं व्यथित था। पंडितजी को किसी तरह खबर लग गई। उन्होंने मेरे पास समाचार भिजवाया कि मेरे पुत्र का पुनर्जन्म होगा। उसकी जन्म-तिथि और जन्म पर उसके शरीर पर दृष्टिगोचर होने वाले चिह्नों का भी उन्होंने सविस्तर विवरण दिया।

पंडितजी की भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य निकली और मेरे पुत्र चंद्रविजयसिंह की आज १२ वर्ष आयु है।

आगे मेरे दोनों ज्येष्ठ पुत्र, दिग्विजयसिंह और विश्वविजयसिंह दीर्घकाल से रोगग्रस्त थे। पंडितजी फिर सहायक सिद्ध हुए और उनके स्वस्थ होने की एक निश्चित तिथि दर्शाते हुए उन्होंने उनकी दीर्घायु की भविष्यवाणी की थी। आज दोनों हृष्ट-पुष्ट हैं।

(२) खंडवा से प्रकाशित दिनांक ३१-३-३४ के 'कर्मवीर' में स्वर्गीय श्री माखनलाल चतुर्वेदी लिखते हैं—

"गत ४ मई को महात्मा गांधी, बाबू राजेन्द्रप्रसाद, श्री

अमृतलाल ठक्कर आदि के साथ मोटर पर रांची से जमशेदपुर के लिए निकले। ३६ मील के बाद मोटर एक खड्ड में गिर गई। पर इस संकट से भगवान ने सुरक्षित बचा लिया।...

अभी थोड़े दिन हुए, उज्जैन के सहृदय साहित्यिक और प्रसिद्ध ज्योतिषी, श्रीयुत सूर्यनारायण व्यास ने एक भविष्यवाणी प्रकाशित की थीं, जिसमें मई का महीना उन्होंने महात्माजी के लिए अनिष्टकारी बताया था।"

(३) ग्वालियर (म० प्र०) से प्रकाशित दिनांक ७-१२-१९५० के 'नवप्रभात' में पंडितजी ने लिखा था कि भारत के उप-प्रधान मंत्री, सरदार वल्लभभाई पटेल के स्वास्थ्य में अत्यन्त चिंताजनक स्थिति आ जाएगी और दिनांक १६ दिसंबर, १९५० तक का अवसर कठिन रहेगा।

१५ दिसंबर, १९५० को सरदार दिवंगत हो गए। देश-विदेश में ऐसी अनेक सफल भविष्यवाणियां उन्होंने की थीं।

श्री सूर्यनारायण व्यास के पिता श्री नारायण व्यास थे। उनके पिता की मृत्यु हो गई। फलस्वरूप उनकी माता ने सती होने का संकल्प किया।

सती होने के पूर्व उन्होंने अपने पुत्र नारायणजी को राख से बनाकर दीया और सिंदूर देकर उनसे कहा कि वह वस्तुएं जब तक उनके खानदान में सुरक्षित रहेंगी, तब तक ज्योतिष-विद्या उनके यहां अक्षुण्ण बनी रहेगी।

वह दीया और वह सिंदूर उनके यहां आज तक सुरक्षित है।

सती का 'स्मृति-चिह्न' उज्जैन के गणेश मंदिर के ऊपर तथा ओखलेश्वर श्मशान, कालभैरव नदी के उस पार आज भी देखा जा सकता है। वर्ष में एक बार श्मशान जाकर पूजन करना उनके लिए अभीष्ट है।

तदनंतर नारायणजी अक्षय कीर्ति की ओर अग्रसर होने

लगे। पूना (महाराष्ट्र) के अखिल भारतीय ज्योतिष अधिवेशन में श्री लोकमान्य तिलक ने उन्हें 'सिद्धांत वागीश' की उपाधि से अलंकृत किया था। उज्जैन से उनके नाम का 'नारायण विजय पंचांग' निकला और वेधशाला में उनका नाम अंकित किया गया।

सम्राट अकबर के प्रधान अमात्य एवं खगोल-मर्मज्ञ महाराज जयसिंह ने उज्जैन की वेधशाला का जीर्णोद्धार कर उसकी स्थापना की थी। उन्होंने वहां के बड़े गणेशजी का मंदिर भी स्थापित किया था।

पंडित सूर्यनारायण व्यास को 'सती के आशीर्वाद' के अतिरिक्त श्री गणेशजी की सिद्धि भी प्राप्त थी।

कीरो और व्यास, दोनों विलक्षण भविष्यवक्ता थे।

उज्जैन का भारती भवन आज भी ज्योतिष के ज्योति-पुंज बिखेर रहा है। श्रद्धेय पंडित सूर्यनारायण व्यास के ज्येष्ठ पुत्र डॉक्टर रश्मिकांत व्यास अब यह पुनीत कार्य कर रहे हैं।

तो यह थे विश्व के सफल भविष्यवक्ता!

एक और क्रॉस एसपायनेज का मामला हमेशा-हमेशा के लिये खत्म हो गया

सन् १९६६ को वह भारत में था। वह मकबूल बट्ट था। सन् १९६८ को सी० आई० डी० सब-इन्सपेक्टर अमरचन्द की उसने हत्या कर दी। उस पर हत्या का मुकदमा चला और उसे फांसी की सजा सुना दी गई।

उसे काल-कोठरी में बंद कर दिया गया।

अगस्त १९६८ में जम्मू-काश्मीर उच्च न्यायालय में उसने अपील दायर की कि उसकी कोठरी का फर्श कच्चा है। इस सबब वह ठंडा रहता है। उसे पक्का करा दिया जाये।

अर्जी स्वीकृत कर ली गई। फर्श पक्का करवाकर उसमें लोहे का दरवाजा भी लगवा दिया गया।

तत्काल कार्रवाई से मकबूल की जेल में धाक जम गई और जेल में उसका मेल-जोल बढ़ गया। उसने इसका फायदा उठाया। और एक बड़ा नोकीला सूजा प्राप्त करने में वह सफल हुआ। उसकी मदद से उसने कोठरी की छत में छेद कर लिया और ९ दिसम्बर, १९६८ को वह अपने साथियों के साथ काल-कोठरी से बाहर हो गया।

२३ दिसम्बर, १९६८ को वह मीर अहमद और गुलाम यासीन के साथ, भारतीय सीमा रेखा पार कर, पाकिस्तान पहुंच गया। पाकिस्तानी मिलिट्री एजेंसी की निगाह से वह बच नहीं सका और मुजफ्फराबाद में गिरफ्तार कर लिया गया। उसने

उनसे कहा कि भारतीय जेल की काल-कोठरी में उसे इतनी यातना दी गई थी कि उसके रोंगटे खड़े हो गये और वह यह निश्चय नहीं कर सका कि उसका दोस्त कौन है और दुश्मन कौन ?

उसका बयान चौंकाने वाला था। फलस्वरूप भारतीय इंटेलिजेंस को जागृत होना पड़ा। वह सक्रिय हुई। उसे किसी भी हालत में बट्ट से संपर्क रखना था। अतः योजना तैयार करनी पड़ी। सीमा-सुरक्षा बल के एक वरिष्ठ अधिकारी को चुना गया और उसे इसकी जिम्मेदारी सौंपी गई।

उसने जिम्मेदारी ग्रहण करते ही अपने मुखबिर छोड़ दिये। हाशिम कुरैशी को इधर अलग से तैयार किया जाने लगा। कुरैशी, तदनंतर, पेशावर पहुंचा और मकबूल बट्ट का वह गहन दोस्त बन गया।

कुरैशी तत्पश्चात् भारत आया और १९७० में फिर बट्ट से पेशावर में मिला। अब दोनों में दांत-काटी दोस्ती कायम हो गई थी। पर कुरैशी खामोश नहीं रहा। वह कलाबाजियां खाता रहा और, अन्ततः पाकिस्तानी इंटेलिजेंस में घुसकर उसने वहां अपनी जगह बना ली। विमान-अपहरण का प्रशिक्षण ग्रहण कर पाकिस्तान-इंटेलिजेंस का वह अहम व्यक्ति बन गया।

तदनंतर, भारतीय यान का उसने सफल अपहरण किया। लाहौर हवाई-अड्डे पर उसने वह विमान उतारा। अन्य स्वागतार्थियों के साथ मकबूल बट्ट भी वहां हाजिर था।

निस्संदेह बट्ट और कुरैशी ताल मिलाकर चल रहे थे। पर पाकिस्तानी-इंटेलिजेंस को शक हो गया। उसने उन्हें कड़ी पूछताछ के लिये गिरफ्तार कर लिया। उनका 'ब्रेन-वाशिंग' किया जाना था। उन्हें लाहौर जेल में बंद कर दिया गया।

मई, १९७६ को उन पर बाकायदा मुकदमा चला। अदालत

ने उन्हें भारतीय एजेंट करार दिया। हाशिम कुरैशी को १४ वर्ष का कारावास और बट्ट तथा उसके साथियों को अदालत उठने तक की सजा सुनाई गई।

पाकिस्तान-सरकार, इस फैसले से संतुष्ट नहीं हुई। अतः उसने उनके खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में अपील दायर कर दी। अपनी अपील में उसने कोर्ट से अर्ज किया कि चूंकि वे भारतीय एजेंट हैं; अतः उन्हें सजाए-मौत फरमाई जाये।

ऊहापोह में ६ वर्ष बीत गये और पाकिस्तान सरकार ने अपनी अपील वापस ले ली।

हाशिम कुरैशी और मकबूल बट्ट सब आरोपों से बरी हो गये। फिर भी पाकिस्तानी-इंटेलिजेंस खामोश नहीं रही। जस्टिस नूरुल अफिन के निष्कर्ष उसने मान लिये और ऐलान किया, "भारत ने इस अपहरण कांड द्वारा पाक-सुरक्षा सेवाओं में अपने एजेंटों की घुस-पैठ कर हमें मूर्ख बना बना दिया। कभी कोई सोच भी सकता है कि एक देश अपने ही देश के यान का अपहरण करायेगा?"

पाकिस्तानी-इंटेलिजेंस ने मकबूल बट्ट को खुले-आम भारतीय एजेंट कहा। भारतीय इंटेलिजेंस इससे हतप्रभ रह गई। उनके सिर पर उसकी कार्य-कुशलता प्रदर्शित करने की जिम्मेदारी आ गई।

सन् १९७६ को अपने साथियों के साथ मकबूल बट्ट फिर से भारत में प्रविष्ट हुआ और एक बैंक-डकैती के आरोप में भारतीय पुलिस ने उसे धर दबोचा।

मकबूल बटट बड़ी कठिनाई से भारतीय पुलिस के हाथ लगा था। कड़ाई से उसकी देख-रेख किया जाना लाजिमी था। सब तरह की गोपनीयता बरतते हुए उसे तिहाड़ जेल में स्थानांतरित कर दिया गया।

वह फांसी की सजा प्राप्त एक मुजरिम था। सन् १९७७ में जम्मू-काश्मीर उच्च न्यायालय ने उसकी दया की अपील खारिज कर दी और सुप्रीम कोर्ट ने उसका समर्थन कर दिया। अन्ततः राष्ट्रपति को दया की याचिका प्रस्तुत की गई।

इधर राजनीति ने अपनी करवट बदली। बर्मिंघम (ब्रिटेन) में भारतीय उप-आयुक्त श्री रविन्द्र महात्रे की हत्या, ६ फरवरी, १९८४ को कर दी गई। सर्वप्रथम उनका अपहरण किया गया। उनकी रिहाई के एवज में कुछ शर्तें रखी गईं। मकबूल बट्ट की रिहाई भी उसमें शरीक थी।

'काश्मीर मुक्ति सेना' ने अपहरण की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली थी। पर मेरी सूचनाओं के अनुसार, 'काश्मीर मुक्ति सेना' का कोई अस्तित्व नहीं है। मेरे अनुमान से 'काश्मीर मुक्ति मोर्चा' द्वारा जब किसी अपराध की जिम्मेदारी किसी ऐसे निकाय पर डालनी होती है, जिसका अस्तित्व ही न हो, तब वह इसी छद्मनाम का प्रयोग करता है।

शर्तों की गूंज विश्व-व्यापी हो गई और स्कॉटलैण्ड-यार्ड पुलिस के सक्रिय होने के पूर्व ही, श्री महात्रे की हत्या कर दी गई। बर्मिंघम से लगभग ४० किलोमीटर की दूरी पर उनका क्षत-विक्षत शव प्राप्त हुआ।

हाशिम कुरैशी अपने विश्वसनीय साथियों के साथ महात्रे की हत्या के समय ब्रिटेन में था और वह सब पाकिस्तानी पासपोर्ट से लैस थे।

स्काटलैण्ड-यार्ड पुलिस के हत्थे चढ़ने के पूर्व ही वह पाकिस्तान पलायन कर गये। स्काटलैण्ड-यार्ड पुलिस के मुंह पर यह एक करारा तमाचा था।

अंतर्राष्ट्रीय जासूसी के खेल का पटाक्षेप हो चुका था।

इधर भारतीय इंटेलिजेंस भी पिट चुकी थी। भारत क्षोभ-

ग्रस्त था। अतः यहां की इंटेलिजेंस को फिर से जागना पड़ा। फलस्वरूप राष्ट्रपति के पास लंबित, मकबूल बट्ट की दया-याचिका राष्ट्रपति द्वारा खारिज कर दी गई। और ११ फरवरी, १९८४ को मकबूल बट्ट को तिहाड़ जेल में फांसी पर लटका दिया गया।

फांसी पर चढ़ने के पूर्व बट्ट ने कहा, "मैं नियति पर विश्वास करता हूं। नियति ने चाहा कि मैं फांसी पर चढ़ूं। मुझे उसका निर्णय स्वीकार है और मैं फांसी पर चढ़ रहा हूं। यह कहना अब कोई मायने नहीं रखता कि मैं निर्दोष था। श्री महात्रे की हत्या के लिये भी मुझे सख्त अफसोस है। एक निर्दोष की नाहक हत्या कर दी गई। मैंने जिंदगी से प्यार किया है। अब मौत से प्यार करने जा रहा हूं।"

मकबूल बट्ट का मृत्यु पूर्व वक्तव्य पर्याप्त उलझनपूर्ण है। और यह लिखना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि 'स्पाईंग' के इतिहास में एक और 'क्रॉस एसपायनेज' का मामला हमेशा-हमेशा के लिये खत्म हो गया।

एक सुन्दर रिहर्सल—'एसपायनेज' और 'काउंटर एसपायनेज' की इतिश्री

हैड़ाखान-आश्रम के पूर्व, घनी वन-वीथियों में, दुर्गम पहाड़ी जल-धाराओं के समीप, विगत चार वर्षों से भारतीय ऊर्जा विभाग के अनुसंधानकर्त्ता यूरेनियम की खोज में लगे हैं। वर्षा के पश्चात् और उसके पूर्व के चंद महीनों में इन परीक्षणों के शिविर आरंभ होते हैं।

इस भूखण्ड के उत्तर में नेपाल तथा उत्तर-पूर्व में चीन की सीमा है। हैड़ाखान-आश्रम नैनीताल से ८० मील के फासले पर है। रास्ता ऊबड़-खावड़ है। आश्रम में पहुंचने के पहले गौला नदी को सात स्थानों से पार करना पड़ता है। इसी हैड़ाखान ग्राम में जून, १९७० को हैड़ाखान बाबा एक गुफा से प्रकट हुए थे।

हैड़ाखान बाबा, पूर्व में, नेपाली मूल के एक विवादास्पद व्यक्ति थे। तस्करी की वस्तुएं लेकर वह अक्सर तिब्बत आया-जाया करते थे। वहां वे एक लंबे अंतराल तक ठहरते थे। और वाक्पटुता ने उन्हें, वहां माहिर कर दिया। आधुनिक रंग-ढंग से वह पूर्णतः परिचित हो गये। फिर उन्होंने शनैः-शनैः भारत की दिशा में खिसकना आरंभ कर दिया। कालीचौड़, गौलापार आदि ग्रामों में रहकर, साधु-संन्यासियों की उन्होंने पर्याप्त सेवा की और उन्हें प्रसन्न कर लिया। अतः, उनकी अहमियत बढ़ गई और दूर-दूर तक वह अपने हाथ-पैर फेंकने लगे।

परिस्थितियां बाबा के अनुकूल थीं। उन्होंने अवसर का फायदा उठाया और एक गिरोह बना लिया। स्वयं वह उसके सरताज बन गये। कालांतर में स्वयं को शिव का अवतार बतलाकर, वह हैड़ाखान बाबा कहलाने लगे।

श्रद्धालु और भक्त उन्हें घेरे रहने लगे। बाबा के अवतरण के प्रामाणिक दस्तावेज लेकर दूर-सुदूर से भक्त-जन आने लगे। शिकागो, पश्चिमी जर्मनी, स्वीडन, लंदन आदि अपवाद नहीं रह गये।

भारतीय फिल्मी सितारे भी इस दौड़ में शामिल हो गये। पब्लिसिटी की ताक में रहने वाली, इन हस्तियों को एक सुअवसर मिल गया था।

बाबा ने स्वयं एक घोषणा की और उन्होंने स्वयं को 'साम्बसदाशिव' का साक्षात अवतार घोषित कर दिया।

हौला नदी के इस पार, भव्य भवन निर्मित हो गये और उस पार किनारे के पहाड़ काटकर, नौ मंदिरों ने एक विशाल परिधि अपने घेरे में ले ली।

बाबा के लिये चांदी के झूले और आदमकद शीशों का एक शीशमहल बन गया। उनकी गतिविधियों को लैंसों में उतारने के लिये वे अत्यधिक सहायक थे।

सुन्दरियां गौरा-पार्वती बनने लगीं।

रानीखेत के कुमायूं रेजीमेंट सेंटर के समीप तथा चिलिया नौले और अन्य महत्वपूर्ण स्थानों के आस-पास यह गतिविधियां केंद्रित थीं। भूतपूर्व सैनिकों को आकर्षित करने के लिये, सुन्दर-सुन्दर जाल फैलाये जाने लगे।

बाबा, बाबा न रहकर सुर अलापने लगे—

"हिंसा ही समाज को अनुशासित करने में समर्थ है। अहिंसा का नारा एक मुरदा नारा है। विश्व के मानचित्र से, मैं अहिंसा

के उन्मूलन का आकांक्षी हूं।"

चीन और अमेरिका से उनके दर्शनार्थ लोग आने लगे। संबंध घनिष्ठ होने लगे। और इधर अमेरिका ने भारत में अपने राजदूत की नियुक्ति, दिनांक ६ नवंबर, १९८१ को कर दी। सी० आई० ए० के प्रसिद्ध उच्चाधिकारी, श्री टैरी जी० बार्न्स नियुक्त किये गये। तोड़-फोड़ में उन्हें महारत हासिल थी।

रूस, अपने तास प्रसारण द्वारा, भारत को सचेत कर चुका था। 'आतंक कौन फ़ैलाता है' के अंतर्गत यह प्रसारण प्रसारित किया गया था।

भारत का सतर्क होना स्वाभाविक था।

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल, श्री चंद्रेश्वर प्रसाद नारायणसिंह का हैड़ाखान ग्राम आना-जाना आरंभ हो गया। अफसरों का काफिला भी उसमें शरीक था। अतः सुरक्षा आवश्यक थी। उसे मद्देनजर रखते हुए खुफिया पुलिस ने अपना जाल फैलाकर हैड़ाखान-आश्रम को अपने घेरे में ले लिया।

सी० आई० ए० सतर्क हो गई। फलस्वरूप १४ फरवरी, १९८४ को विवशतावश बाबा को इस नश्वर संसार से विदा लेनी पड़ी। भक्तों पर वज्राघात हुआ। पर वज्राघात से राष्ट्र बच गया। अन्ततः 'एसपायनेज' और 'काउंटर एसपायनेज' के एक सुन्दर रिहर्सल की इतिश्री हो गई।

चीनी यात्री भारत आया था

वह चीनी यात्री ह्वेनसांग था। वह भारत आया था तब सम्राट हर्षवर्धन का युग था।

ह्वेनसांग का जन्म ६०५ ई० में होनानफू के समीप एक नगर में हुआ था। उसने भिक्षु की दीक्षा ली थी। चङ्गन में रहते-रहते उसने भारत की यात्रा की योजना बनाई। चीन-सम्राट से उसने यात्रा के लिए सहायता मांगी। सम्राट ने सहायता देना अस्वीकार कर दिया।

सांग हताश नहीं हुआ। वह अपने दो साथियों के साथ लांगचू की ओर चल दिया। लांगचू में व्यापारी उसके सहायक हुए। वह गोबी की मरुभूमि पहुंचा। कठिनाइयों से त्रस्त होकर, उसके साथी उसे छोड़कर चले गए।

वह एकाकी हो गया। पर निरुत्साहित नहीं हुआ।

चलता-चलता वह हामीनगर पहुंचा। हामी नरेश ने उसे कुछ दिन तक अपने यहां धर्मोपदेश देने के लिए रोक लिया। हामी से वह काशार राज्य पहुंचा। काशार नरेश ने उसका अपूर्व स्वागत किया और अपने यहां दो माह रखकर, उसे विदा किया। बिदाई पर उन्होंने उसे पर्याप्त धनराशि तथा अंगरक्षक दिए। वहां से वह पठानो के राज्य नसांग में पहुंचा। वहां भी उसका स्वागत किया गया। नसांग से समरकंद आकर वह आक्सास नदी के तट पर पहुंचा। वहां उसके साथ एक व्यक्ति हो लिया, जो पर्याप्त समय तक भारत में रहा था। दोनों मिलकर बौद्ध प्रचार केन्द्र

बलख पहुंचे। वहां से वे अन्य बौद्ध धर्म के केन्द्र बामियान नगर में पहुंचे। तदनंतर, नगरहार और पेशावर होता हुआ सांग तक्षशिला पहुंचा। वहां से काश्मीर गया। काश्मीर में दो वर्ष तक उसने अध्ययन किया और तत्पश्चात् मथुरा तथा थानेश्वर होता हुआ सम्राट हर्ष की राजधानी कन्नौज में पहुंचा।

सम्राट हर्ष ने उसका सम्मान किया। कन्नौज से चलते हुए वह अयोध्या, प्रयाग, कौशाम्बी, श्रावस्ती, कपिलवस्तु, कुशी-नगर, पाटलिपुत्र, गया, राजगृह होता हुआ नालन्दा पहुंचा। नालन्दा में दो वर्ष तक वह संस्कृत और बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन करता रहा। फिर आसाम होता हुआ ताम्रलिप्ति पहुंचा।

६४० ई० में उड़ीसा होता हुआ सांग कांचीपुर पहुंचा। तदनंतर महाराष्ट्र, सौराष्ट्र, मुल्तान तथा गजनी होता हुआ वह पुराने मार्ग से काबुल नदी के किनारे पहुंचा। वहीं से पामीर पर्वतमाला को पार करके काशनर तथा खोतान होता हुआ वह चीन वापस लौट गया।

चीन पहुंचने पर वहां के सम्राट ने उसका स्वागत किया तथा उसे सम्मान प्रदान किया। पहले सहायता न देने पर सम्राट ने खेद व्यक्त किया। ह्वेनसांग अपने किये गए परिश्रम से संतुष्ट था और अपना शेष जीवन उसने भारत से लाये ग्रंथों का अनुवाद करने और यात्रा का विवरण लिखने में व्यतीत किया।

६६४ ई० में ह्वेनसांग का स्वर्गवास हो गया। उस समय उसकी आयु ५९ वर्ष थी।

पर क्या सांग भविष्य में होने वाले चीनी आक्रमण के लिए मार्ग प्रशस्त नहीं कर गया था? सम्भवतः वह कर गया था। फिर भी उसके उत्कट साहस की प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता।

भारत ह्वेनसांग की कलम से

ह्वेनसांग ने भारत की तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक अवस्था का निम्न विवरण दिया है।

(१) **राजनीतिक दशा**—सम्राट हर्षवर्धन का शासन प्रबंध व्यवस्थामय था। राजा प्रजा की रक्षा तथा उसके सुख का ध्यान रखता था। राज्य में नाम-मात्र के कर थे। सरकारी भूमि को चार भागों में विभाजित किया गया था। एक से सरकारी खर्च चलता था। दूसरा भाग सरकारी कर्मचारियों को जागीर के रूप में दिया गया था। तीसरा भाग कला और विद्या की उन्नति में प्रयुक्त होता था। चौथा भाग विविध संप्रदायों के उपयोग में लाया जाता था।

सड़कें चौड़ी और सुन्दर थीं। छायादार वृक्ष बहुतायत में थे। राज्य के प्रति विश्वासघात पर आजीवन कारावास प्रदान किया जाता था। चुंगी तथा घाट के कर राज्य अर्थव्यवस्था के अंग थे। राजा के पास विशाल सशस्त्र वाहिनी थी और सैनिक चुस्त थे।

(२) **सामाजिक अवस्था**—जनता का रहन-सहन साधारण था। जनता नम्र तथा व्यवहार में मृदुल थी। जनता स्वच्छ वस्त्र पहनती थी। बाल-विवाह प्रचलित था। स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था। गुड़, घी और दूध इतना प्रचुर था कि जनता मांस का सेवन 'नहीं' के बराबर करती थीं। जनता का ज्ञानार्जन की ओर झुकाव था। तत्कालीन विद्वानों की भाषा

संस्कृत थी। जनता की सेवा संन्यासी ज्ञान के प्रसार द्वारा करते थे। वे वीतरागी होते थे। निन्दा और प्रशंसा उनके लिए अर्थहीन थीं। कर्त्तव्य ही उनके लिए प्रमुख था।

(३) **आर्थिक व्यवस्था**—आजीविका का प्रमुख साधन कृषि था। व्यापार में वैश्य प्रमुख थे। व्यापार विदेशों से भी होता था। नगरों के भवन सुन्दर थे। घरों के अन्दर विविध प्रकार की चित्रकारी होती थी। भगवान् बुद्ध की मूर्तियां बाजार में बहुमूल्य धातुओं से निर्मित हुई मिलती थीं। ह्वेनसांग अपने साथ ऐसी प्रतिमाएं चीन ले गया था। सम्राट मुक्त हस्त से दान देता था। इससे यह प्रमाणित होता था कि उस समय की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ थी।

(४) **धार्मिक दशा**—ह्वेनसांग के अनुसार—

विदेश में मान्यता थी कि भारत ब्राह्मणों का देश है। सांग ने भारत में ब्राह्मणों को विद्यारत देखा। उन्हें प्राचीन ग्रन्थों का प्रकांड विद्वान पाया। सत्य की खोज में वे निरन्तर व्यस्त रहते थे। वे पर्यटन करते और भिक्षा मांगते थे। यही उनका अभीष्ट था। शासक वर्ग उनका आदर करता था। दरबार में उन्हें अपनी इच्छा से आने-जाने की छूट थी।

बौद्ध धर्म भी भारत में अपनी उन्नति के चरम शिखर पर था। बौद्ध धर्म सम्प्रदाय के हीनयान तथा महायान के भिक्षु सम्मिलित रूप से रहते थे। उनके साथ ब्राह्मण भी रहते थे। धार्मिक सहिष्णुता का यह उत्कृष्ट उदाहरण था।

(५) **शिक्षा दशा**—अध्यापकों का व्यवहार विद्यार्थियों के प्रति उदार था। विद्यार्थी परिश्रमी थे और गुरु के प्रति श्रद्धावान थे। सात वर्ष की अवस्था से ही बालक शास्त्र पढ़ने लगता था। बौद्धों का सबसे बड़ा केन्द्र नालंदा विश्वविद्यालय था। चीन, मंगोलिया, जापान आदि देशों से यहां विद्यार्थी विद्या अध्ययन

के लिए आते थे।

सम्राट हर्षवर्धन ने, विश्वविद्यालय को दो सौ गांव दान में दे रखे थे।

ह्वेनसांग के अनुसार—

हिमालय पार कर भारतीय विद्वान चीन पहुंचे थे और उन्होंने चित्रमय चीनी लिपि का अध्ययन किया था। तिब्बत में भी भारतीय सभ्यता का प्रचार और प्रसार प्रचुर मात्रा में हुआ था। दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों से भारत के सम्बन्ध मधुर थे।

सती प्रथा हर्षवर्धन के समय प्रचलित थी। स्वयं हर्ष की बहन, राजश्री ने सती होने का असफल प्रयास किया था।

ह्वेनसांग भारत में १५ वर्ष तक रहा और जो कुछ उसने लिखा और कहा, वह स्पष्ट लिखा और कहा। उसकी लिखाई और कथन ऐतिहासिक प्रमाण हैं।

अतः उनको दृष्टिगत रखते हुए चीन को तिब्बत और उससे समानान्तर समस्त भूमि भारत को तत्काल वापस कर ऐतिहासिकता को जीवित रखना चाहिए और अनर्गल प्रचार कर, भारतीय क्षेत्र पर अपना दावा नहीं करना चाहिए। देखना है चीन कितना इतिहाससंगत है।

हमें आशा है। क्योंकि हाल में भारत विद्या अनुसंधान के सी० पी० रामस्वामी अय्यर संस्थान में भाषण देते हुए 'चाइनीज लिटरेचर' के प्रधान संपादक और चीन के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के सदस्य यंग शियानयो ने कहा—

"बौद्ध धर्म और हिन्दू धर्म दोनों तीसरी शती ईसा पूर्व में चीन पहुंचे। तत्कालीन हान साम्राज्य ने दोनों धर्मों को संरक्षण दिया। छठी शताब्दी में सुई साम्राज्य का राजपरिवार दो पीढ़ियों तक हिन्दू रहा। यंग साम्राज्य ने दोनों धर्मों को संरक्षण दिया।

चीनी दुर्गा की पूजा करते थे। दुर्गा को चीन में शिवामुबु कहा जाता था। सातवीं शताब्दी के बाद भारत में बौद्ध धर्म का पतन हुआ और हिन्दू धर्म पुनः स्थापित हुआ। चीन में भी इसका प्रभाव पड़ा। फलतः महादेव मंदिर बनाए गए। वहां शिव को 'सारा' कहते थे। नंदसंपुरा नामक एक हिन्दू पुजारी का उल्लेख करते हुए उसने उसे भगवान शिव या नंद का उपासक बतलाया।

आगे उन्होंने कहा कि ईसा के ६१८ वर्ष पश्चात चीन में विद्रोह हुआ। महारानी यशोदा गद्दी पर बैठीं। भगवान कृष्ण की माता के नाम पर यह नाम रखा गया था...।"

चीन की शस्त्रों की झनकार अब उपदेशात्मक स्वर झंकृत करती हैं। उसमें आह्वान है। एक अनजाना सांकेतिक निमंत्रण है।

पर वह तभी कर्णप्रिय होगा, जब चीन भारत को तिब्बत और उससे समानांतर समस्त भूमि भारत को वापस कर दे।

प्रतीक्षा है उस क्षण की !

पीसा की वह मीनार

६३२ वर्ष पुरानी वह 'पीसा की झुकी हुई मीनार' है।

वह विश्व प्रसिद्ध एवं ऐतिहासिक है। सिरजो रोमन कला की यह अद्वितीय कृति है। इटली के पीसा नगर में यह अवस्थित है।

'पियाज दे दुआनो' नामक एक विशाल चर्च का निर्माण सन् ११५२ में हुआ। इटली के ख्याति-प्राप्त शिल्पकार फ्लोरंटाइन बोनानो ने इस चर्च प्रांगण में १० अगस्त, ११७४ को मीनार की नींव का पहला पत्थर रखा।

सन् ११८५ तक मीनार की तीन मंजिलें बन चुकी थीं। सहसा मीनार एक ओर झुकने लगी। नींव के भराव में खामी रह गई थो। बोनानो को अपनी गल्ती महसूस हुई। मीनार का काम उन्होंने बंद कर दिया।

पीसावासी मीनार का काम आगे बढ़ाने की निरंतर मांग करते रहे। विवश हो सन् १२७५ में तत्कालीन महान शिल्पकार 'गियोवनो दि सिमोने' को इसे पूर्ण करने का भार सौंपा गया।

सिमोने के प्रयास भी असफल रहे। अंततः सन् १३५० में इंसब्रुक के० विलियम ने अंतिम मंजिल जोड़कर १७९ मीटर ऊंची मीनार पूर्ण कर दी। इतने प्रयास पर भी उसका झुकाव ४ फुट और दस इंच था।

मीनार के निर्माण का कार्य रुक-रुककर चलता रहा।

२०० वर्ष में जब वह बनकर पूर्ण हुई तो उसका झुकाव और

अधिक हो गया।

मीनार श्वेत पत्थरों से बनी है। इसमें आठ खण्ड हैं। नीचे वाले खण्ड में १५ खम्भे, पश्चात् सातवें खण्ड तक प्रत्येक में ३०-३० खम्भे तथा ऊपरी खण्ड में १२ खम्भे हैं। ये खम्भे ही मीनार के आधार हैं। इसमें लगभग ३०० सीढ़ियां हैं। मीनार के शिखर पर ७ घंटे लगे हैं। और हर एक घंटे का वजन ३.५ टन है।

मीनार के झुकाव का कारण भूमि का पोला और गीला होना भी हो सकता है। मीनार समुद्र से १० मील की दूरी पर बनी है। सागर के बहाव से लाई गई मिट्टी, रेत और साठ प्रतिशत जल से पीसा की भूमि स्पंज के समान हो गई है। मीनार की भूमि पूर्णतः दलदल है। मीनार के भूखण्ड की दीवारें १३ फुट से अधिक मोटी हैं और ६ फुट गहरी नींव उसे संभाल नहीं पा रही है। अतः जमीन धंसती जा रही है।

मीनार के झुकाव का सर्वप्रथम अध्ययन सन् १६११ में पीसा विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जी० चीकोनेत्री ने किया था। सन् १६३४-३५ में मीनार में लगभग १/४ इंच का झुकाव बढ़ गया।

अब तक मीनार १७ फुट झुक चुकी है। प्रतिवर्ष यह झुकाव बढ़ता जा रहा है।

मीनार के ६ घंटे अब विद्युत-चालित हो गए हैं। सातवां घंटा पहले से बंद है।

दूसरे विश्वयुद्ध की भयंकर बमबारी के कारण मीनार में दरारें पड़ गई हैं। मीनार के घंटों में यह खासियत है कि वे हमेशा बजाये नहीं जा सकते। विजय प्राप्त होने या किसी विशेष व्यक्ति के मर जाने पर ही इनके बजाए जाने का प्रावधान है। इसका कारण है कि घंटों का कंपन मीनार की दीवारों में समाकर उसे जर्जर बनाता है। मोटर, लारी और स्वचालित वाहन जो उस

क्षेत्र से निकलते हैं किसी प्रकार की ध्वनि नहीं कर सकते। मीनार के १५०० मीटर की परिधि तक कोई पानी नहीं निकाल सकता। पर इस प्रतिबंध का किंचित ही पालन होता है। कुएं पहले से ही खुदे हुए हैं और उस परिधि की जनता के लिए जल अत्यावश्यक है।

केवल मीनार से सरकार को प्रतिवर्ष पर्यटकों द्वारा ५० लाख रुपये से अधिक की राशि प्राप्त होती है। लगभग दो लाख से अधिक पर्यटक यहां प्रतिवर्ष आते हैं।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक गेलीलियो ने इस मीनार से पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का नया रहस्य ज्ञात किया था। उन्होंने आठवीं मंजिल से खड़े होकर, दो गोले नीचे फेंके थे। उनमें से एक का वजन अधिक और दूसरे का उसका आधा था। किन्तु आश्चर्य है कि दोनों गोले एक साथ जमीन पर गिरे।

वैज्ञानिकों का मत है कि मीनार कम से कम दस और अधिक से अधिक १०० वर्ष तक भी खड़ी रह सकती है। मीनार बमों, भूकंपों की मार और झटके सह चुकी है फिर भी वह अपनी जगह पर झुकती जा रही है। पीसावासियों का विश्वास है कि मीनार भले ही झुकती जाए, पर गिरेगी नहीं। यह नहीं कि वे उसके झुकने से चिंतित नहीं हैं। वे चिंतित अवश्य हैं। उन्हीं की चिंता को देखते हुए सरकार ने मीनार को गिरने से बचाने की समस्या का ठोस सुझाव देने वाले व्यक्ति को १०,००० डालर का पुरस्कार देने की घोषणा की है।

देखना है वह कौम भाग्यशाली है जिसे १०,००० डालर का यह पुरस्कार मिलेगा। ऐसा कोई भाग्यशाली है भी कि नहीं, भविष्य ही इसका उत्तर देगा।

मुसोलिनी को अपनी माता और पत्नी से अपार लगाव था

द्वितीय विश्वयुद्ध के धुरी राष्ट्रों में उसका राष्ट्र भी सम्मिलित था। अपने राष्ट्र का वह सर्वेसर्वा था। इटली था उसका राष्ट्र और वह था मुसोलिनी। उसका बाह्य रूप एक योद्धा का था। वह कठोर था। पर उसका अन्तःकरण अत्यन्त कोमल था। वह एक पारिवारिक प्राणी था और उसे अपनी माता पर असीम श्रद्धा थी।

उसने लिखा है, "मेरी हमेशा यही धारणा रही है कि स्त्रियों को सार्वजनिक जीवन में आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। स्त्री की तुलना पुष्प के समान करता हुआ वह आगे लिखता है कि थकावट से क्लांत बुद्धिजीवियों को वे सुख और शांति प्रदान करती हैं। स्त्री को आदर्श पत्नी तथा माता होना चाहिए। और इसमें सफलता उनके स्त्रीत्व की कसौटी है।" भारतीय संस्कृति के आदर्श 'सफल मातृत्व' से सम्भवतः वह प्रभावित था।

एक आदर्श पत्नी की तलाश में, मुसोलिनी काफी भटका। अन्ततः उसे पाने में वह सफल हुआ। अपने घर की व्यवस्थापक एक लड़की को उसने पत्नी के रूप में चुना। उसकी कार्य-सुचारुता से वह पर्याप्त प्रभावित था। वह रेशिली थी। उसकी जुल्फें एक निराली छवि लिए थीं।

उसने उससे सन् १९१५ में विधिवत विवाह कर लिया और उग्र भीड़ द्वारा मारे जाने के पूर्व तक उसका पारिवारिक जीवन

अत्यन्त सुखमय रहा। उसकी प्रेयसी की जुल्फें उसकी थकावट दूर करती थीं।

रेशिली भी उसे समर्पित थी। एक गिलास ताजा गाय का दूध जब तक वह उसे पिला नहीं देती थी, तब तक वह उसे घर से बाहर नहीं निकलने देती थी। अपनी निजी देख-रेख में वह उसका भोजन बनवाती थी। उसमें ताजे और पौष्टिक पदार्थ होते थे।

चाय, कॉफी, सिगरेट, सिगार, शराब आदि मादक वस्तुओं को वह उसे हाथ नहीं लगाने देती थी। हेर हिटलर के समान ही वह उनसे दूर रहता था।

मुसोलिनी अपनी प्रेयसी के अगाध प्रेम को समझता था। वह भी इनसे दूर रहता था।

वह एक पारिवारिक प्राणी था। उसने अपने माता-पिता का पारिवारिक जीवन अत्यन्त निकट से देखा था। अपनी माता से वह प्रभावित था। इसकी अभिव्यक्ति उसने एक पत्रकार-सम्मेलन में की थी।

एक पत्रकार ने जब उससे पूछा कि अपने परिवार में सबसे अधिक प्रेम वह किससे करता है तो अश्रुपूरित नेत्रों से मुसोलिनी ने उत्तर दिया—

"अतीत की बात है। अपनी माता को मैं सबसे अधिक चाहता था। मुझे छोड़कर वह चली गई। एक आक के वृक्ष के नीचे उसकी समाधि बनीं। कभी-कभी भूले-बिसरे मैं वहां पहुंच जाता और वहां पहुंचकर मैं अतीत में खो जाता। मानस-पटल पर अतीत की स्मृतियां झीने-झीने आने लगतीं।…

जब मैं जागृत होता तो अपनी श्रद्धामयी माता को श्रद्धांजलि अर्पित कर, भारी मन से वापस आ जाता।"

इस प्रकार इटली का सर्वेसर्वा वह मुसोलिनी था, जिसे अपनी माता और पत्नी से अपार लगाव था।

फाकलैण्ड पर ग्रेट ब्रिटेन ने चढ़ाई की थी। एन० एस० ए० ने उसकी सशस्त्र सेना के संकेताक्षरों का पता लगाया था। उन्हें ग्रेट ब्रिटेन को सौंप दिया था। फलतः, अर्जेन्टाइना को माल्विनास खाली करना पड़ा।

पराजय के पश्चात्, अर्जेन्टाइना ने स्वयं को आधुनिकतम शस्त्रों से लैस करने का महत्त्वाकांक्षी कार्यक्रम हाथ में लिया है।

ब्रिटेन के समाचार-पत्र 'यार्कशायर पोस्ट' के अनुसार—

"अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से प्राप्त ऋण, अर्जेन्टाइना अपनी सैन्य-सुविधाओं में व्यय कर रहा है। उसकी वायुसेना कीं फाकलैण्ड युद्ध में सर्वाधिक क्षति हुई थी। युद्ध में उसने २०० एक्सोसे मिसाइलें और २७ मिराज, युद्ध में खोये थे। इसके अतिरिक्त ४५ स्काईहॉक तथा २१ पुकारां नामक लड़ाकू जहाजों की क्षति भी उसे सहनी पड़ी थी। नई योजना के अंतर्गत अर्जेन्टाइना की वायुसेना में २० एक्सोसे मिसाइलें, ७४ मिराज फाइटर, २४ स्काईहॉक, ९ इंटेरडार्ड, ३ हरक्युलिस, ७१ पुकारां लड़ाकू जहाज शामिल किये जायेंगे।

युद्ध में अर्जेन्टाइना को 'वीमन टेनिशयों दिगेयो' नामक जलपोत की क्षति सहनी पड़ी थी। अब सेना में दो नये आधुनिक जलपोत शामिल किये जा रहे हैं। हाल ही में, मई के मध्य में अर्जेन्टाइना ने 'सुपर इटेन्डर्ड' नमक बेड़े को सागर में उतारा है। जर्मनी से उसने 'एलमीरान्दे ब्राडन' नामक तोपें भी खरीद

ली हैं। इस तोप की विशेषता है कि यह एक मिनट में ४५ राउंड फायर करती है, जो ब्रिटेन की मार्क तोपों से कहीं बेहतर हैं।

अर्जेन्टाइना, जो परमाणु बम बना रहा है, विशेषज्ञों के अनुसार उसका वजन लगभग १ हजार किलोग्राम से कम ही होगा और उसे किसी भी वायुसेना से ले जाने में दिक्कत नहीं होगी।

'यार्क शायर पोस्ट' को इतनी अधिक खबर कैसे लग गई। यह आश्चर्यजनक है। अवश्य ही, एन० एस० ए० ग्रेट ब्रिटेन की सेवा में संलग्न है। सुरक्षा के तथ्यों का उजागर होना, किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा व्यवस्था के लिये हानिकारक है। उससे उसकी प्रतिष्ठा कभी भी धूल में मिल सकती है। अतः समय का तकाजा हैं कि अर्जेन्टाइना अपनी गोपनीय सेवा को अधिक सुदृढ़ करे।

साथ ही ग्रेट ब्रिटेन को भावी युद्ध के प्रति सचेत हो जाना चाहिये। युद्ध में परमाणु विस्फोट, कभी भी विश्वयुद्ध को प्रेरित कर सकता है। संसार में इस समय, परमाणु बमों की संख्या ५०,००० है। उनकी विस्फोटक शक्ति २० अरब टन टी० एन० टी० है। अगस्त '४५ में, हिरोशिमा पर गिराये गये परमाणु बमों का विस्फोट शक्ति से यह सोलह गुना अधिक है। यदि इन बमों का विस्फोट एक साथ हो जाये तो, संसार के प्रत्येक स्त्री, पुरुष और बच्चे पर, साढ़े चार टन टी० एन० टी० के विस्फोट का प्रहार होगा। कोई भी व्यक्ति तीस ग्राम टी० एन० के प्रभाव से आसानी से मर सकता है।

'द फेट ऑफ अर्थ' (पास बुक्स लिमिटेड, लंदन) के लेखक जोनाथन शैल के अनुसार, यदि ऐसा हुआ तो, वास्तविक नरक का साक्षात्कार होगा।

सन् १९६२ में शांति तथा आम निरस्त्रीकरण के लिये आयोजित विश्व सम्मेलन में बोलते हुए, रूसी प्रधानमंत्री

निकिता ख्रुश्चेव ने कहा था, "इन विनाशक हथियारों का संग्रह इस बिन्दु तक पहुंच चुका है कि नाभिकीय बमों से लैस प्रक्षेपास्त्र किसी दिन अपनी इच्छा से उड़ना शुरू कर देंगे।"

श्री निकिता ने, यह सन् १९६२ में कहा था। आज उनके कथन को ३१ वर्ष बीत चुके हैं। परिस्थिति और जटिल तथा भयानक हो चुकी है।

परिस्थितियों को देखते हुए आशा है, यदि अर्जेन्टाइना से युद्ध हुआ तो वह जो कदम उठायेगा, वह बहुत सोच-समझ कर उठायेगा। और, इसी में मानव कल्याण निहित है। पर इसमें संदेह नहीं है कि अर्जेन्टाइना को विश्व के नक्शे में आने के लिये विश्व की कोई भी शक्ति रुकावट नहीं डाल सकती।

आशा है, कोई भी अमंगलकारी कदम उठाने के पूर्व दोनों महान शक्तियां 'मानवता' का ध्यान सर्वप्रथम रखेंगी। हम आस्थावान हैं।

ग्रेट ब्रिटेन की महान क्रांति

सन् १६८८, ग्रेट ब्रिटेन में महान क्रांति हुई थी। वास्तविक ब्रिटिश शासक के स्थान पर एक विदेशी ब्रिटिश शासक बन गया। १७वीं शताब्दी की यह विस्मयकारी घटना, बिना किसी रक्तपात के घटी थी।

सन् १६८५ में जेम्स द्वितीय इंग्लैण्ड का शासक बना। वह निरंकुश तथा कट्टर कैथोलिक था। आर्जिल तथा मन्मथ के विद्रोहों का उसने निरंकुशता से दमन किया। उसकी हिंसा ने जनता को आतंकित कर दिया। राजा के प्रति घृणा फैल गई।

जेम्स ने एक विशाल वाहिनी का गठन कर, उसमें कैथोलिक भरती किये। राजा के इस कृत्य से जनता में अविश्वास फैल गया। प्रोटेस्टेंटों पर अत्याचार करने के लिये लुई प्रसिद्ध था। ब्रिटिश जनता संदेह में पड़ गई।

जेम्स ने हाई कमीशन कोर्ट की स्थापना की। उस कोर्ट का मुख्य कार्य जेम्स-विरोधियों को दंडित करना था।

'टेस्ट एक्ट' द्वारा उच्च पदों पर कैथोलिकों की नियुक्तियां निषिद्ध थीं।

जेम्स ने उक्त एक्ट समाप्त करने का प्रयत्न किया। कैथोलिकों को उसने आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड में उच्च पदों पर नियुक्त किया। आयरिश सेना से प्रोटेस्टेंटों को जेम्स ने निकाल बाहर किया। उसने एक आदेश निकालकर कैथोलिक मत की आलोचना निषिद्ध कर दी। डॉक्टर शार्प उस समय लंदन के

पादरी थे। उन्होंने उक्त आदेश को मानने से इन्कार कर दिया। उनको पदच्युत कर दिया गया। जेम्स ने विश्वविद्यालय कैथोलिकों से भर दिए।

असंतोष अंदर ही अंदर पनपता रहा।

जेम्स दूरदर्शी नहीं था। वह वास्तविकता समझ न सका। उसके मित्र भी उसके शत्रु बन गए। जेम्स की वृद्धावस्था को देखते हुए जनता धीरज धरे हुए थी कि आज नहीं तो कल वह मर जाएगा। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसकी पुत्री मेरी गद्दी पर बैठेगी। फिर सब ठीक हो जाएगा।

मेरी प्रोटेस्टेंट थी। अकस्मात् जेम्स की द्वितीय पत्नी के पुत्र हुआ। पुत्र का कैथोलिक होना स्वाभाविक था। अतः जनता अपना धीरज खो बैठी।

३० जून, १६८८ को पादरियों का मुक्ति-दिवस था। उस दिन भिन्न-भिन्न मत के सात व्यक्ति, जिनमें ह्रिग और टोरी दल के भी व्यक्ति थे, हालैण्ड के राजा विलियम को इंग्लैण्ड आने का निमंत्रण दे बैठे। विलियम अपनी पत्नी मेरी और १५,००० सैनिक लेकर, इंग्लैण्ड की ओर चल पड़ा। इतनी विशाल सेना, रोमन आक्रमण के समय ही प्रयुक्त हुई थी। विलियम निर्द्वन्द्व इंग्लैण्ड में प्रविष्ट हो गया। उसे सबका सहयोग मिला। जेम्स बंदी बना लिया गया और उसे रोचेस्टर में रखा गया। किसी तरह वह फ्रांस भाग निकला। पार्लियामेंट के आपातकालीन सत्र में, राज-सिंहासन को रिक्त घोषित कर मेरी और विलियम को संयुक्त शासक घोषित कर दिया गया। विलियम, विलियम तृतीय कहलाया। यह बिना रक्तपात की क्रांति थी।

राजा और पार्लियामेन्ट में, १७वीं शताब्दी से चला आया संघर्ष समाप्त हो गया। इस क्रांति से फ्रांस के लुई चतुर्दश की शक्ति कम हो गई। विश्व के अन्य राष्ट्र भी ब्रिटेन

की भांति शासन स्थापित करने के लिये प्रेरित हुए। अन्ततः क्रांति के परिणाम अन्तःराष्ट्रीय भी हुए। बाह्य सहायता लेकर ब्रिटेनवासी अपना मान और प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला चुके थे। यह एक प्रकार की देशद्रोहिता थी।

आयरिश इस क्रांति से लाभान्वित नहीं हुए। प्रोटेस्टेंट धर्म अवश्य लाभान्वित हुआ। वह राज्य-धर्म घोषित कर दिया गया। प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने धर्म-पालन का अधिकार प्राप्त हो गया।

पर सम्भवतः यह सिर्फ कागजी प्रक्रिया मात्र थी। इंग्लैण्ड में अभी कैथेलिकों का वर्चस्व है। हाल ही में, वहां निरीह भारतीयों की लूट-पाट की गई और उन पर जो निर्मम अत्याचार किये गये वे किस दिशा की ओर संकेत करते हैं?

- इंग्लैण्ड के भारतीय उसके प्रति पूर्ण वफादार हैं।
- फिर भी उन पर वहां अत्याचार होते हैं।
- कोरे आश्वासनों से कुछ नहीं होता। ब्रिटेनवासियों को इस दिशा में शीघ्र ही सोचना होगा।
- इंग्लैण्ड की सार्वभौमिकता के लिये वह लाभदायी होगा।

आशा है, इंग्लैण्ड के बुद्धिजीवी इस दिशा में पहल करेंगे। प्रतीक्षा है!

भारतीय गगन—अंधकार युग का पटाक्षेप

भारतीय गगन में सूर्योदय हुआ। अंधकार विलीन हुआ। गुप्त-काल का प्रारम्भ हुआ, इतिहास क्रमबद्ध हुआ। साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक विकास के साथ कला में भी निरंतर विकास आरम्भ हुआ। गुप्त शासकों को इसका श्रेय जाता है। अत: जिज्ञासा होती है कि गुप्त शासक कौन थे ?

डॉक्टर त्रिपाठी के अनुसार, "गुप्त शब्द के प्रयोग के कारण, उन्हें वैश्य कहा जा सकता है।" पर यह सत्य के विपरीत दिखता है।

डॉक्टर जायसवाल के अनुसार, "वह कारस्कार गांव के जाट थे तथा पंजाब के निवासी थे।" यह भी तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता।

डॉक्टर बनर्जी के अनुसार, "वे लिच्छवी वंश के क्षत्रिय थ।" जनश्रुति डॉक्टर बनर्जी का समर्थन करती है। अतः इसके संस्थापक श्री गुप्त को क्षत्रिय मानना ही उचित होगा।

गुप्त युग का अत्यन्त शक्तिशाली शासक चंद्रगुप्त हुआ। 'महाराजाधिराज' की उपाधि धारण कर, उसने एक नवीन सम्वत् चलाया। २६ फरवरी, ३२० ई० से उसका प्रारम्भ होता है। इस तिथि में चंद्रगुप्त सिंहासन पर बैठा था।

उसके उपरान्त समुद्रगुप्त सिंहासनारूढ़ हुआ। वह एक महत्त्वाकांक्षी शासक था। वह सम्राट बनना चाहता था। उसने सिंहासन पर बैठते ही दिग्विजय आरम्भ कर दी। उत्तरी भारत

के राज्यों को विजित कर, उन्हें उसने अपने राज्य में मिला लिया। दक्षिणी भारत में उसने राज्यों को विजित कर, उपहार और कर के एवज में उनके राज्य उन्हें वापस कर दिए।

अन्य राज्यों पर उसने इसलिए आक्रमण नहीं किया क्योंकि उन राज्यों के अधिपतियों ने समुद्रगुप्त को कर देना स्वीकार कर लिया था।

समुद्रगुप्त के इस अभियान के फलस्वरूप, उसका राज्य पूर्व में हुगली से पश्चिम में जमुना तथा चंबल तक और उत्तर में हिमालय की तलहटी से दक्षिण में नर्मदा नदी के तट तक फैला था।

स्मिथ इसका आकलन करते हुए लिखता है कि इतने विस्तृत साम्राज्य पर पहले अशोक ने ही शासन किया था। उसके साम्राज्य के उत्तर-पूर्व, दक्षिण-पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम में अधीन तथा आश्रित राज्य थे। ये राज्य सम्राट समुद्रगुप्त को वार्षिक उपहार और कर देते थे। वे सम्राट की कृपा के आकांक्षी थे।

अपने बाहुबल से समुद्रगुप्त अपने को भारत का सम्राट बनाने में सफल हुआ। सम्पूर्ण भारत उसके प्रभाव में था। भारत के बाहर जो शासक थे वे उससे मैत्री संबंध स्थापित करने को सदैव इच्छुक रहते थे। युद्ध-क्षेत्र में वह हमेशा आगे रहता था। अपने बाहुबल को वह 'सब कुछ' समझता था। युद्ध-क्षेत्र में उसकी सूझ-बूझ अनोखी रहती थी। वह महान सेनानायक था। अजेय वीर था।

वह राजनीति का प्रकांड पंडित भी था।

भारत में उस समय आवागमन के साधनों की अत्यन्त शोचनीय अवस्था थी। अतः दूरस्थ राज्यों पर विजय प्राप्त कर, उसने उन्हें अपने साम्राज्य का अंग बनाने के एवज में, उनके

अधिपतियों द्वारा अधीनता स्वीकार कर लेने पर उनके विजित राज्य उन्हें वापस कर दिए। इससे सद्भावना का निर्माण हुआ। गुप्त साम्राज्य सुदृढ़ हुआ। भारत में एकता स्थापित हुई। जनता सुखी एवं सम्पन्न हो गई।

समुद्रगुप्त अत्यन्त उदार था। दीन-हीन और असहाय व्यक्तियों की सहायता के लिए वह हमेशा तत्पर रहता था। दान में भी वह औढरदानी था। उसका व्यक्तित्व अलौकिक था।

वह साहित्यकारों का आश्रयदाता था। कवि हरिवेन और बौद्ध विद्वान बसुवत्र उसके आश्रित थे। उसकी मुद्राएं यह प्रमाणित करती हैं कि गायन और वादन का वह प्रेमी था। वीणा बजाती, ऊंचे मंच पर बैठी एक राजमूर्ति उसकी मुद्राओं पर अंकित थी।

इन्हीं कारणों से समुद्रगुप्त अपने उत्तराधिकारी को एक व्यवस्थित, समृद्ध और गौरवमय साम्राज्य देने में सफल हुआ। और उसके पदार्पण से भारतीय गगन में सूर्योदय हुआ, जिसकी लालिमा अनंत काल तक चलती रही।

क्या पाताल-लोक है ?

श्रीमद्भागवत् के पंचम स्कंध तथा रामचरितमानस में पाताल-लोक का वर्णन है।

रामायण का पाताल-लोक का अधिकारी अहिरावण राम और लक्ष्मण के लिये घात लगाकर बैठता है। अवसर पाकर वह उनका अपहरण कर लेता है। वायुपुत्र हनुमान को पता लगता है। वे पाताल-लोक में घुस जाते हैं। अहिरावण को युद्ध में पराजित कर, राम-लक्ष्मण को अपने कंधे पर बिठाकर पृथ्वी पर ले आते हैं।

पर यह पौराणिक कथा हुई। जिज्ञासा होती है कि पाताल-लोक कहां है ?

पृथ्वी के भीतरी भाग के संबंध में, वैज्ञानिकों में आपसी मत-भेद हैं। कोई इसके भीतरी भाग को ठोस, कोई द्रव और कोई गैसीय बतलाता है।

प्रयोग पर प्रयोग किये जा रहे हैं। वास्तविकता ज्ञात नहीं हो रही है।

स्वीडन के वैज्ञानिक अरीनिउस के अनुसार "पृथ्वी के गर्भ में धातुओं का खजाना भरा है। अरबी और फारसी सभ्यता, पृथ्वी में कारूं का खजाना है।" लार्ड कैलविन, उबला और बिना उबला अण्डा लेते हैं, उन्हें घुमाते हैं। केवल उबला अण्डा घूमता है। वह इसलिए घूमता है, क्योंकि उसका भीतरी भाग ठोस है। पृथ्वी के आंतरिक भाग के ठोस होने का प्रतिपादन करते हैं।

दूसरे पक्ष के वैज्ञानिक पृथ्वी के भीतरी भाग को द्रव्य मानते हैं, क्योंकि ज्वालामुखियों से निकला लावा तरल रूप में होता है।

इन सबको एक ओर रख, अब हम पृथ्वी के अंदर विद्यमान उच्च दबाव तथा तापमान के प्रभाव का अध्ययन करते हैं।

किसी भी ठोस वस्तु पर जब दबाव अधिक बढ़ जाता है, तो उसमें विद्यमान परमाणु एक-दूसरे के अधिक समीप आ जाते हैं। तापमान जब बढ़ जाता है तब यह परमाणु अस्थिर हो तितर-बितर होने लगते हैं। उच्च दबाव और तापमान एक-दूसरे के विपरीत हो, विपरीत प्रभाव का प्रदर्शन करते हैं। उच्च तापमान के कारण वस्तुएं पिघलने लगती हैं और द्रव में बदल जाती हैं। इसी प्रकार वस्तुओं के 'मेल्टिंग' पाइन्ट (द्रवणांक) वस्तुओं पर दबाव अधिक बढ़ जाने पर अपनी बढ़ोतरी पर आ जाते हैं। पृथ्वी की वस्तुएं तरल रूप में बदल जाती हैं और किसी भी दरार द्वारा पृथ्वी के बाहर आकर बहने लगती हैं। अतः इससे यह प्रमाणित नहीं होता कि पृथ्वी का भीतरी भाग तरल है।

विश्वास किया जाता है कि पृथ्वी का केन्द्रीय पिण्ड, अधिक-तर धातुओं से बना है। उसमें लोहे और निकल का सम्मिश्रण मुख्य है।

रूसी वैज्ञानिक वोरिस लेवाइन की विचारधारा इसके विपरीत है। उनके मतानुसार, पृथ्वी का भीतरी भाग शैल पदार्थों से बना है। केन्द्रीय भाग में, यह शैल पदार्थ १४,००,००० वायुमंडल के दबाव पर हैं। इस कारण इनका धनत्व अधिक है।

पौराणिक कथानक को ध्यान में रखते हुए, रूसी वैज्ञानिक सत्य के अधिक समीप प्रतीत होता है—घनीभूत अन्वेषण की आवश्यकता है। पर पौराणिक कथानक को असत्य नहीं कहा जा

सकता। पूर्व के अन्वेषणों की, आज के युग में केवल पुनरावृत्ति मात्र हो रही है।

समस्त उपलब्धि के पश्चात्, सम्भवतः, सभ्यता की इतिश्री हो जायेगी। सृष्टि के विघटन और गठन की यह निरंतर प्रक्रिया प्रतीत होती है।

माता पार्वती के लिये कृष्ण को गणेश बनना पड़ा

देवताओं में पूजनीय पुत्र की आकांक्षा, माता पार्वती को थी। शिव से आज्ञा लेकर उन्होंने 'पुण्यक व्रत' रखा।

व्रत की समाप्ति पर वृहत अनुष्ठान आयोजित किया गया। देवी-देवता निमंत्रित किये गये। सबका समुचित आदर-सत्कार किया गया।

साक्षात् विष्णु और लक्ष्मी भी पधारे। माता पार्वती को उन्होंने अपनी संपूर्ण कलाओं के अवतार के तुल्य पराक्रमी और ज्ञानी पुत्र होने का आशीर्वाद दिया।

ब्रह्मा के पुत्र सनत्कुमार, माता के यज्ञ के पुरोहित थे। शास्त्र की विधियों के अनुसार उन्होंने यज्ञ को पूर्ण किया। यज्ञ की समाप्ति के पश्चात्, उन्होंने दक्षिणा में पार्वतीजी से साक्षात् शिव को मांग लिया।

पार्वती और उपस्थित अन्य देवी-देवताओं ने उन्हें बहुत समझाया; पर वे न माने।

सनत्कुमार, दिगंबर बाबा को डमरू बजवाते हुए समस्त लोकों का भ्रमण करना चाहते थे। यह उनके लिये चिर-आनंद था।

भगवान शिव ने विहंसकर सनत्कुमार का समर्थन किया। विवशता थी।

अकस्मात, अंतरिक्ष से तेजोमय पुंज कैलास की ओर आता दिखाई दिया। प्रकाश अलौकिक था। कैलास आभा से प्रकाशमान हो उठा।

पीतांबर पहने भगवान श्रीकृष्ण प्रकट हुए। वे बांसुरी-वादन कर रहे थे। छवि अत्यन्त लुभावनी थी। माता पार्वती के हृदय में उनके समान पुत्र की इच्छा जागृत हो उठी।

सनत्कुमार हतप्रभ रह गये। उनका हृदय-परिवर्तन हुआ। भगवान शंकर को उन्होंने माता पार्वती को सौंप दिया।

यज्ञ समाप्त हुआ। उचित आदर-सत्कार प्राप्त कर समस्त देवता अपने-अपने गन्तव्य स्थल की ओर चले गये।

"मां, भूख लगी है, कुछ खाने को दो।" एक दीन ब्राह्मण द्वार पर खड़ा गिड़गिड़ा रहा था।

माता पार्वती असमंजस में पड़ गईं। फिर भी सादर उन्होंने ब्राह्मण को आसन पर बिठाया। सुस्वादु लड्डुओं से भरा थाल उसके सामने रख दिया। कुछ ही क्षणों में उसने सब लड्डू खा लिये। और मांगे। माता ने दिये। उसका पेट नांद के समान फूल गया।

माता को आश्चर्य हुआ। उसे खाते देख माता शिवजी को बुलाने चली गईं।

शंकर-पार्वती दौड़े-दौड़े आये। वहां उन्हें कोई नहीं दिखा। शंकर मुस्करा दिये।

माता ने उनके मुस्कुराने का कारण पूछा।

भगवान बोले, "भद्रे, तुम्हारा होने वाला पुत्र ही आया था। भगवान कृष्ण की छवि देखकर तुम्हारे हृदय में उनके सदृश पुत्र की इच्छा जागृत हुई थी। कृष्ण ने अपना अंश भेज दिया। वह कहीं अदृश्य नहीं हुआ हैं। वह तुम्हारे अंदर समा गया है।

समय बीतता गया। माता पार्वती के पुत्र हुआ। उसकी तोंद फूली थी। इसलिये वह गणेश कहलाये।

माता की सद्इच्छा के आगे भगवान कृष्ण को झुकना पड़ा। गणेश के रूप में उनका अंश पैदा हुआ। पतिव्रताओं की इच्छाएं उत्कट होती हैं। समयानुसार ही उनकी गति भी होती है।

सन् १८४८ की यूरोप की क्रांतियां

सन् १८५७ में भारत में क्रांति हुई थी। यह क्रांति निरंकुश शासन-व्यवस्था के विरुद्ध थी। भारतीय क्रांति के कारणों पर, अनेक बुद्धिजीवी अपने-अपने कल्पना-स्रोत से न खतम होने वाली विरुदावली लिख बैठे। सिलसिला अभी भी जारी है। दुःख है कि १८५७ के मूल प्रेरणा-स्रोत पर किसी भी विद्वान ने विस्तृत प्रकाश नहीं डाला।

निरंकुश शासक-व्यवस्था के विरुद्ध, यूरोप के अनेक देशों में, सन् १८४८ में जनक्रांतियां हुईं। उनमें प्रमुख देश थे, फ्रांस, इंग्लैंड, हॉलैण्ड, आस्ट्रिया और इटली।

फ्रांस में लुई फिलिप एक असफल शासक था। उसने निरंकुशता की नीति अपनाकर, मध्यम वर्ग को विशेष अधिकार प्रदान कर दिये।

साधारण वर्ग उपेक्षित था। अतः वह राजा के विरुद्ध हो गया। इंग्लैंड के हाथों राजा को पराजित होना पड़ा। बेल्जियम तथा पूर्वी समस्या में उसका हस्तक्षेप अनावश्यक प्रमाणित हुआ। इटली, पोलैण्ड, स्विट्जरलैण्ड के देशभक्तों को सहायता न देकर, उसने घोर प्रक्रियावादी मैटरनिक को सहायता दी। अतः यूरोप के देशों में फ्रांस की प्रतिष्ठा समाप्त हो गई।

लुई फिलिप ने स्पेन की सम्राज्ञी की बहन से विवाह कर, इंग्लैंड से संबंध बिगाड़ लिये। इधर फ्रांस में समाजवादी विचार-धारा ने जोर पकड़ा। फ्रांस औद्योगिकीकरण के दौर से गुजर रहा

था। उद्योगपति श्रमिकों का शोषण कर रहे थे। बेरोजगारी फैल रही थी। अतः श्रमिक संगठनों का गठन हुआ। लुई ब्लांट, सेंट साइमन जैसे समाजवादी उनके साथ थे। पूंजीपतियों के खिलाफ आवाज उठी। लुई फिलिप पूंजीपतियों से मिल गया।

राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभा भी लुई के विरुद्ध होने लगी। लुई ब्लांट, पत्रकार तिये, लामार्टिन तथा गारनिय पागे ने अपना-अपना समर्थन वापस ले लिया। सन् १८४७ में प्रधानमंत्री गीजो को हटाने की मांग की गई। २३ फरवरी, १८४८ को गीजो ने त्यागपत्र दे दिया। जनता और फौज में, फ्रांस की सड़कों पर खुलकर लड़ाई होने लगी। लुई फिलिप इंग्लैंड भाग गया।

फ्रांस में गणतंत्र की स्थापना हो गई। फ्रांस की जनक्रांति की सफलता ने, अन्य देशों के क्रांतिकारियों को क्रांति के लिये प्रेरित किया।

हालैंड में क्रांति—वियना कांग्रेस में प्रस्ताव पारित किया गया। बेल्जियम को हालैण्ड के साथ सम्मिलित कर दिया गया। बेल्जियमवासी असंतुष्ट हो उठे, क्योंकि वे कैथोलिक थे, जबकि डचवासी प्रोटेस्टेण्ट थे। डचवासियों की जनसंख्या बेल्जियनों की अपेक्षा कम थी।

हालैण्ड के राजा, विलियम प्रथम ने दोनों को बराबर प्रतिनिधि चुनने का अधिकार प्रदान किया। शिक्षा पादरी-वर्ग के हाथ से छीन ली गई। अतएव वे भी असंतुष्ट हो गये।

१८३० में बेल्जियम हालैण्ड से पृथक कर दिया गया। फ्रांस की जनक्रांति की सफलता का समाचार हालैण्ड पहुंच चुका था।

१८४८ में विलियम द्वितीय का शासन था उदारवादी नेताओं ने उपयुक्त अवसर समझ, विद्रोह कर दिया। विद्रोह बढ़ता गया। राजा को झुकना पड़ा। राजा ने प्रेस, भाषण और लेखों पर से प्रतिबंध हटा लिये और जनता को शासन के अधिकार

प्रदान कर दिये। क्रांति हालैण्ड में भी सफल रही।

स्विट्जरलैण्ड में क्रांति—राज्य-सत्ता पर मध्यम वर्ग का अधिकार था। कैथोलिकों की प्रभुसत्ता थी। फ्रांस की क्रांति की सफलता से प्रेरित हो, कैथोलिकों को वहां की जनता ने पराजित कर दिया। उदार शासन की स्थापना की गई। मतदान के अधिकार विस्तृत कर दिये गये। साधारण वर्ग के लोग भी विधायक बनने लगे।

स्विट्जरलैण्ड की क्रांति भी सफल हुई।

प्रशा की क्रांति—फ्रांस के क्रांतिकारियों की सफलता से प्रेरित होकर, बर्लिन में क्रांतिकारियों ने विद्रोह कर दिया। राजमहल घेर लिया। राजा ने गोली-चालन के आदेश दे दिये। २०० क्रांतिवीर शहीद हुए। जनता ने स्थान-स्थान पर मोर्चेबन्दी कर ली। राजा भयभीत हो उठा और उसने उदार शासन की स्थापना कर दी।

इंग्लैण्ड में क्रांति—फ्रांस की क्रांति की सफलता की खबर इंग्लैंड में भी पहुंच गई। १० अप्रैल, १८४८ को, क्रांतिकारियों की एक वृहत सभा हुई। चार्टिस्ट आंदोलन आरंभ हो गया। आंदोलन असफल रहा। पर समय की आवाज को वहां के राजा ने समझ लिया। मताधिकार विस्तृत कर दिये। लोकतंत्र के लिये मार्ग प्रशस्त हो गया।

आस्ट्रिया में क्रांति—आस्ट्रिया में भिन्न-भिन्न जाति के लोग निवास करते थे। भाषा और संस्कृति भी उनकी भिन्न-भिन्न थी। किसानों की दशा शोचनीय थी। व्यवस्था सामंतवादी थी। प्रेस, भाषण और लेखों पर प्रतिबंध था। असंतोष बढ़ रहा था। १८ मार्च, १८४८ को एक विशाल जुलूस ने मेटरनिक के महल को घेर लिया। मेटरनिक ने समय की पुकार को समझ लिया। वह इंग्लेंड भाग गया। आस्ट्रिया का सम्राट फर्डिनेंड इससे भयभीत

हो उठा। उसने जनता की मांगें स्वीकार कर लीं। सब प्रकार के प्रतिबंध हटा दिये गये। कुलीन वर्गों के विशेषाधिकार समाप्त कर दिये गये। जनता को कुछ अधिकार सौंप दिये गये। जनता और अधिक मांग करने लगी। सम्राट जुलाई में भाग गया, पर अगस्त को इंसब्रुक से वापस आकर, जन-आंदोलन को उसने क्रूरता से कुचल दिया।

बोहमिया आस्ट्रिया का अंग था। वहां की जातियां चैक, क्रीट, मौरेवियन तथा सवियन थीं। उन्होंने आस्ट्रियन सेना के कमांडर जनरल विडिज ग्रेब्ज के महल को घेर लिया। कमांडर ने भयंकर गोलीबारी कर जन-आंदोलन को दबा दिया। हंगरी में माग्यार जाति प्रमुख थी और वह आस्ट्रिया से मुक्ति चाहती थी। कास्मुथ तथा डीग, राष्ट्रीयता का घनघोर प्रचार कर रहे थे। हंगरी में विद्रोह हो गया। सम्राट को विवशतावश समझौता कर, जनता की मांगें माननी पड़ीं।

हंगरी में रहने वाली क्रोटियन, रूमानियन तथा सवियन जातियों को इससे कोई लाभ नहीं हुआ। हंगरी के क्रांतिकारियों ने गणराज्य की घोषणा कर कास्मुथ को अपना राष्ट्रपति बना लिया। आस्ट्रियन सम्राट की सहायता के लिये रूस के जार आगे आये। हंगरी की सेना परास्त हो गई। हंगरी में पुनः निरंकुश शासन-व्यवस्था स्थापित हो गई।

इटली में क्रांति—उस समय इटली अनेक छोटे-छोटे देशों में विभक्त था। फ्रांस की क्रांति की सफलता का समाचार सुन, यहां लाम्बार्डी नामक नगर में सर्वप्रथम विद्रोह हुआ। यह प्रांत आस्ट्रिया के अधीन था। आस्ट्रिया सेना पराजित हुई। फिर वेनिस का विद्रोह भी सफल हुआ। सार्डिनिया के नरेश की मदद से वेनिस स्वतंत्र हुआ था।

काबूर, मेजिनी तथा गेरीबाल्डी ने संगठित होकर सार्डिनिया

नरेश को विवश किया कि वे आस्ट्रिया से युद्ध छेड़ दें। टस्कली के शासक पायस नवम, पारमा, मेडेना, लोम्बार्डी और वेनेशिया के देशभक्तों ने भी उन्हें सहायता का वचन दिया। आस्ट्रिया के सम्राट की कूटनीति ने, पायस नवम और टस्कली के राजा को युद्ध से हटवा दिया। अत: सार्डिनिया नरेश चार्ल्स पराजित हो गया। उसे सिंहासन से हटवा दिया गया और उसका पुत्र विक्टर इमेनुअल वहां का शासक बना। आस्ट्रिया से उसने संधि कर ली।

फिर से क्रांतिकारियों के गढ़ों में निरंकुश शासन व्यवस्था कायम कर दी गई और इटली के एकीकरण का स्वप्न भंग हो गया।

१८४८ में हुई इन क्रांतियों में फ्रांस तथा प्रशा मुख्य रूप से सफल रहे। इसलिये आस्ट्रियन साम्राज्य के क्रांतिकारी विफल रहे; क्योंकि उनमें नेतृत्व का अभाव था।

कार्ल मार्क्स का, सन् १८४८ का 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' भी इन क्रांतियों के लिये एक प्रेरक स्रोत था।

सन् १८४८ की यूरोप की क्रांति की प्रेरणा नौ वर्ष के अंतराल में भारत पहुंची। 'निरंकुशता' के विरुद्ध क्रांतिवीर हथियार लेकर अवश्य उठ खड़े हुए, पर हार गये; क्योंकि आस्ट्रियन क्रांतिकारियों के समान, उनमें भी कुशल नेतृत्व का अभाव था।

तो यूरोप की क्रांतियों की प्रेरणा से ही अभिभूत हो भारतीय उठ खड़े हुए थे।

और शेष कारण गौण थे।

शरणागत—एक भारतीय परंपरा

आदिकाल से भारत परंपराओं का देश रहा है। शरणागत को शरण देना भी उसकी एक परंपरा है।

रूस से संबंध मधुर हैं। पर इसके बावजूद भी उसने श्वेत-लाना को शरण दी थी। द्वितीय विश्वयुद्ध के एक विजेता, स्टालिन की वह पुत्री थी। रूस में वह रहना नहीं चाहती थी। अतः भाग खड़ी हुई।

भारत में उसने प्रथम विश्राम किया। मार्च, १९७६ में उसने नई दिल्ली स्थित अमेरिकी दूतावास में शरण ले ली थी और तभी से वह अमेरिका में है। स्वतंत्र भारत की वह प्रथम विदेशी शरणागत थी।

स्वेतलाना ने साप्ताहिक 'आबजर्वर' को एक भेंट में हाल में बताया कि १७ वर्ष पहले उसे यह नहीं मालूम था कि दोनों महाशक्तियां—रूस और अमेरिका—एक दूसरे से कितनी मिलती-जुलती हैं। दोनों में बहुत-सी समानताएं हैं।

स्वेतलाना का कहना है कि दोनों महाशक्तियों की एक-दूसरे के बारे में आपसी राय पूर्णतः गलत प्रचारों पर आधारित है, जिसकी बुनियाद चालीस वर्ष पुरानी है।

आगे उन्होंने कहा कि उन्हें सोवियत संघ की अपेक्षा अमेरिका में अधिक आजादी महसूस हुई और वह भी, खास तौर से उस हालत में जब जेब भरी हो।

स्वेतलाना के शब्दों में सत्यता का पुट दिखता है।

इस परिप्रेक्ष्य में, महाशक्तियों को राजनीतिक दृष्टिकोण, मानवता के नाते परिवर्तित कर देना आवश्यक प्रतीत होता है। यदि हो गया तो मानव अपने दूरगामी कल्याण की आभा देखने में समर्थ होगा और इसका श्रेय स्वेतलाना को जाएगा। इसमें दो मत नहीं हैं।

इतिहास में वीर राजपूतों के अनेक उदाहरण हैं। मिट गये, पर शरणागत् को आंच नहीं आने दी। सहस्रों वर्ष पूर्व भारत के उशीनर प्रदेश के राजा शिवि थे। राजदरबार लगा था। एक घायल कबूतर उड़ता हुआ आया और राजा की गोद में बैठ गया। राजा संवेदना से प्रेरित हो उसे थपथपाने लगे।

अकस्मात एक बाज प्रकट हुआ और राजा को मनुष्य-वाणी में संबोधित करते हुए बोला, "राजन् ! आप मेरा आहार मुझे दे दें।"

राजा ने कहा, "यह मेरे शरणागत हुआ है। अतः मैं इसे तुझे नहीं दे सकता।"

बाज ने कहा, "राजन् ! मैं भूखा हूँ। किसी के आहार का अपहरण करने से आपका धर्म विनष्ट होगा।"

राजा ने कहा, "शरणागत को मैं दे नहीं सकता। तुम्हें किसका मांस चाहिये, मुझे बताओ।"

बाज बोला, "राजन् ! मुझे मांस देने के लिए, किसी न किसी जीव की हत्या तो की ही जायेगी। पर आपके राज्य के समस्त जीव आपकी प्रजा हैं। वे आपके शरणागत हैं। फिर उनकी हत्या करने के बजाय मुझे यह कबूतर ही दे दिया जाये। इसके अलावा मुझे दूसरे के द्वारा मारे गये किसी जीव का मांस खाने से तृप्ति भी नहीं होती। अतः कबूतर ही मेरा अभीष्ट है।"

राजा धर्मसंकट में पड़ गये। थोड़ी देर विचारने के बाद वे बाज से बोले, "मैं जीवित हूं। मेरा मांस पवित्र है। बोलो, कितना

मांस चाहिये।"

बाज बोला, "कबूतर के वजन का।"

राजा ने तराजू मंगाकर एक पलड़े पर कबूतर को बैठा दिया।

राजा के शरीर को हाथ लगाना धर्म-निषिद्ध है। अतः, राजा ने तलवार हाथ से लेकर एक भुजा काटकर पलड़े पर रख दी।

तराजू जैसी थी वैसी ही रही। राजा ने दोनों टांगें काटकर तराजू के पलड़े में रख दीं। तराजू में फिर भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

राजा उचककर स्वयं तराजू पर बैठ गये। तराजू झुक गई।

राजा का शरीर लहूलुहान था। अत्यन्त वीभत्स दृश्य था। उन्होंने इसी अवस्था में अपने शरीर का भोजन करने के लिये बाज को आमंत्रित किया।

हठात् आकाश से हर्ष की ध्वनियां आने लगीं। राजा पर फूलों की वर्षा होने लगी। बाज के स्थान पर, इन्द्र और कबूतर के स्थान पर अग्निदेव खड़े थे। राजा को आशीर्वाद देते हुए उनके हाथ ऊपर उठे थे।

राजा का शरीर यथावत बलिष्ठ और सुंदर हो गया। देवताओं ने राजा के धर्म और न्याय की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए आशीर्वाद दिया।

तो यह भारतीय परंपरा है। अनेक परंपराओं में से एक परंपरा है।

यह चलती रही है और चलती रहेगी। कारण, भारत परंपराओं का देश है। और श्वेतलाना यहां शरणागत हो चुकी थी।

कहां क्या नहीं होता ?

मिस्र के प्रतिष्ठित दैनिक 'इजिप्शियन गजट' के अनुसार—

दाढ़ी की विचित्रता

इस्लामी पुनरुत्थान के इस दौर में कोई इस्लामी देश दाढ़ी का विरोध करे तो निश्चय ही यह आश्चर्य की बात होगी। पाकिस्तान और अरब देशों में जनता को दाढ़ी रखने के लिए विवश किया जाता है। पर तुर्की ऐसा देश है, जहां दाढ़ी का जमकर विरोध हो रहा है।···

इस्लामी देश चाहते हैं कि उनकी युवा पीढ़ी धर्म की ओर आकर्षित हो तथा प्रारंभ से ही वह मुस्लिम चरित्र को अपना ले। किन्तु तुर्की अपनी युवा पीढ़ी को कठमुल्लापन से दूर रखकर उसे आधुनिक बनाने में अधिक विश्वास रखती है।···

तुर्की के अंकारा शहर के अंकारा विश्वविद्यालय की सीनेट ने अपने क्षेत्रांतर्गत शिक्षण संस्थाओं को आदेशित किया है कि कॉलेज और स्कूलों में विद्यार्थियों को दाढ़ी रखकर न आने दें। इसी तरह लड़कियों को भी शिक्षा संस्थाओं में बुरका या स्कार्फ पहनकर आना वर्जित है।···

सितंबर, १६८१ से लगाई गई यह पाबंदी कट्टरपंथी जमातों के विरोध के बावजूद भी अपनी जगह पर कायम है। पाबंदी का कड़ाई से पालन किया जाता है। और किसी लड़के या लड़की द्वारा अवहेलना किये जाने पर उसे शिक्षण संस्था से निष्कासित

कर दिया जाता है।''

गजट के ही अनुसार, ''तुर्की में दाढ़ी न मुंडवाने के आरोप में अभी ४०० से अधिक कर्मचारियों को उनकी सेवा से मुक्त कर दिया गया है। लगभग १०,००० से अधिक लड़के-लड़कियां शिक्षण संस्थाओं से निकाले जा चुके हैं। सरकार ने कट्टरपंथियों की एक न चलने दी और बड़े साहस से अपने फैसले पर टिकी हुई है। उसके संकल्प ने स्वर्गीय कमाल अतातुर्क की याद ताजी कर दी है, जिन्होंने अधिकारियों के विरोध के बावजूद रातों-रात तुर्की को राजभाषा बना दिया था।

इधर पाकिस्तान में कराची के एक वकील अंसर बर्नी ने पाकिस्तान की शरियत अदालत में राष्ट्रपति जियाउल हक, महान्यायवादी शरीफुद्दीन पीरजादा, शरियत अदालत के आफताब हुसैन, संघीय सलाहकार समिति के अध्यक्ष ख्वाजा मोहम्मद सफदर और उन सभी लोगों पर मुकदमा दायर किया है जिनकी दाढ़ी या मूंछ सफाचट थीं। श्री बर्नी का तर्क है कि कुरान के अनुसार दाढ़ी रखना बहुत जरूरी है और इन लोगों ने दाढ़ी-मूंछ मुंडवाकर, इस्लाम विरोधी कार्य किया है। इसलिए इन्हें अपने पदों पर बने रहने का कोई अधिकार नहीं है। दाढ़ी की विचित्रता असीम है!

संत की स्मृतियां भी मिटाई जाती हैं

कहा जाता है, ४८० ईसवी में संत पिरान गरदन में पत्थर बांधकर तैरे थे और लौटने पर उन्होंने भगवान का धन्यवाद अदा करने के लिए ब्रिटेन के कोर्नवाल में अपने हाथों से एक चर्च बनाया था। तीर्थयात्रियों के लिए यह दूसरा जेरूसलम था।

ब्रिटेन में, सन् १८३५ और १८४४ में भीषण आंधी-तूफान आए। संत का चर्च रेत में दब गया। इसका पुनरुत्थान करने के

एवज में सरकार ने चर्च के अधिकारियों को इसे बेच दिया।

पिरान जाबूलो की पैरिश परिषद ने इसे खरीद लिया। परिषद ने भी उसके पुनरुत्थान का कोई प्रयास नहीं किया। इसके विपरीत, उसने चर्च पर हजारों टन रेत डालकर उसे दबा दिया और संत की स्मृति को हमेशा-हमेशा के लिए मिटा दिया गया।

संत पिरान के प्रति उनके अनुयायियों द्वारा यह एक अन्याय था।

तंत्र के नाम पर

राज्याश्रित हो तंत्र फला-फूला है। किसी गांव या नगर में पहुंचने पर तांत्रिक एक हुजूम इकट्ठा कर लेता है।

सबको अपनी-अपनी पड़ी रहती है। प्रत्येक अपने-अपने प्रति जिज्ञासु रहता है। तांत्रिक को भी अपना अभीष्ट साधने की पड़ी रहती है। अभीष्ट-साधना के लिए वे भिन्न-भिन्न तरीकों का इस्तेमाल करते हैं।

राजस्थान के कुछ तांत्रिक अपने दल-बल के साथ चलते हैं। भीतर के कक्ष में मुख्य पंडित बैठता है और बाहर के कक्ष में छोटा पंडित बैठता है। भक्तों से उनकी समस्याएं सुन छोटा पंडित उन्हें बड़े पंडित के कमरे में छोड़ने जाता है। कमरे में प्रवेश करते ही छोटा पंडित बड़े पंडित को संकेत कर देता है। मुख्य पंडित संकेत जान जाता है और उसी के अनुसार भक्त की अगुवाई करता है। सुनकर भक्त आश्चर्य में पड़ जाता है और तांत्रिक का प्रभाव उस पर जम जाता है। कुछ संकेत मैंने समझे हैं, जैसे छोटा पंडित यदि कान पर हाथ रखता है तो उसका अर्थ होता है, विवाह की समस्या। यदि अपनी आंख मलता है तो उसका अर्थ होता है, संतान की समस्या। और भी संकेत हैं। मैं जानने के प्रयास में हूं।

इसी प्रकार राजस्थान के एक तांत्रिक को मैं जानता हूं जिसने अपनी कामवासना की तृप्ति के लिए एक अनूठा तरीका अपनाया था। खूंटी से उसने एक नाड़ा बांध रखा था। संतान-प्राप्ति या प्रेमी को अपने अनुकूल बनाने के लिए कोई महिला यदि उस प्रकोष्ठ में प्रवेश करती है तो वह उसे गांठ खोलने को कहता है। यदि महिला अपनी साड़ी की गांठ खोल देती है तो वह सर्वप्रथम उससे अपनी काम-पिपासा शांत करता है; फिर उसका अवैध संबंध चलता रहता है। रुपया-पैसा उसे मिलता रहता है और उसकी वासना की तृप्ति होती रहती है।

यदि कोई मुंहफट मिल जाती है तो वह उसे मूर्ख बताता है और खूंटी की गांठ की ओर इशारा करते हुए कहता है, "मैंने इसे खोलने को कहा था, तू तो मूर्ख है। चली जा, तेरा काम नहीं हो सकता। तेरी मूर्खता के कारण ही तेरा पति रूठ गया है या तेरे बच्चा नहीं हो रहा है।"

यह प्रयोग वह केवल धनाढ्य या पहुंच वाली महिलाओं पर करता है। इस तरह इस तांत्रिक ने राजस्थान में अत्यधिक असामाजिक गतिविधियां संचालित कर रखी हैं। वह लड़कियों का अवैध व्यापार करता है तथा अफीम, तस्करी, नौकरी दिलाना, तरक्की दिलाना आदि कार्य खुलेआम करता है। खुलेआम इसलिए करता है क्योंकि मंत्री और संत्री तक उसकी पहुंच है। किसी न किसी रूप में वह उससे दबे हैं।

देखें, कब तक यह लीला चलती है; क्योंकि फर्रुखाबाद का हाल का एक किस्सा 'तांत्रिक की बर्बादी' मुख्य रूप से चर्चित रहा है। इसमें एक तांत्रिक महोदय ने एक बड़े अधिकारी की पुत्री को अभिनेत्री बना देने का प्रलोभन देकर उससे दैहिक संबंध स्थापित कर लिए थे। लड़की गर्भवती हो गई और उसे गर्भवती करने वाले तांत्रिक का आज अता-पता भी नहीं है।

प्रकृति भी तंत्र से जुड़ी है, अतिश्री होने पर ही उसका प्रहार होता है। तब तक मूक बनी वह जनता की प्रतिक्रिया देखती रहती है। देखें उसका प्रहार कब होता है!

१३ वर्ष का वनवास

भगवान राम को १४ वर्ष का वनवास मिला था। पर अब १३ वर्ष के वनवास का उदाहरण सामने आया हैं। ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा 'रॉक ऑफ जिब्राल्टर' विगत १३ वर्ष से यूरोप से कटा रहा है। स्पेन में समाजवादियों ने शासन की बाग-डोर संभाल ली। फिलिप गोंजालेज प्रमुख बने। उनके आदेश पर उनकी सरहद का फाटक सशस्त्र पुलिस ने खोल दिया। अब जिब्राल्टर-निवासी मुक्त रूप से स्पेन में आने-जाने लगे।

जनरल फ्रांको के शासनकाल में, इस फाटक पर ताला लगाया गया था।

फिलिप गोंजालेज की सरकार ने इसे 'मानवीय सद्भावना' का एक कदम कहा है। पर फिलिप महोदय का यह वक्तव्य संशयास्पद लगता है। यदि सही है तो लगता है कि जैसे-जैसे समय बीतता जाता है वनवास की अवधि कम होती जा रही है। यदि असत्य है तो लगता है जिब्राल्टर की मुक्ति का यह पूर्वाभास है। और यदि पूर्वाभास है तो ब्रिटेन को सतर्क हो जाना चाहिए।

असामाजिक तत्त्वों का शरणालय—लंदन

जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है, लंदन शहर असामाजिक तत्त्वों का अड्डा बनता जा रहा है।

जब जूरिक के गुप्तचर, फिजो को बंदी बनाने वाले थे तो रेवरेंड माइकेल स्कॉट ने फिजो की जमानत लेकर उसे जूरिक से बाहर करवा दिया। उसके पश्चात् लंदन में फिजो को एक

छोटा-सा जहाज का कारखाना खुलवा दिया। लंदन में बैठे फिजो भारत के विरुद्ध अनर्गल प्रचार करने लगे।

मिजो नेशनल फ्रंट के मुख्य नेता लालडेंगा भी किसी तरह भारत से भागकर लंदन के शरणालय में पहुंच गए। इवेंगेरियल मिशन लालडेंगा को उनकी भारत विरोधी कार्यवाही के लिए आर्थिक मदद देने लगा। उनके सहयोगी ही उन्हें विश्वासघाती कहते। इन तथ्यों को मद्देनजर रखते हुए भारत के देशी पत्र लालडेंगा की प्रशस्तियां लिखने लगे। धन की महिमा अपरंपार है!

खालिस्तान के स्वयंभू नेता जगजीतसिंह चौहान भी लंदन के इस शरणालय में भरती होने की तैयारी कर रहे हैं।

लंदन के इस शरणालय में कोई नियम या कायदे हैं अथवा नहीं, यह कहा नहीं जा सकता। पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि जो अपने देश का नहीं हुआ, वह पराये देश का क्या होगा। यदि उसे अपने देश में जन-समर्थन मिला होता तो अपना देश छोड़कर क्यों भागता? जब उसे जन-समर्थन प्राप्त नहीं है, तो उसकी उपयोगिता शून्य है।

ब्रिटेन को यह समझना और ऐसे अराजकतावादी के प्रति सतर्क रहना चाहिए।

ब्रिटेन की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा है।

कद भी छोटा होता है

अभी तक कद बढ़ाने में ही जनता की विशेष रुचि पाई गई है। यह शापित कलियुग है। लोग कद के छोटे पैदा हो रहे हैं। अपने छोटे-छोटे कद उन्हें नहीं सुहाते। उनके मुख से प्रकृति के प्रति विद्रोही उद्‌गार निकल पड़ते हैं। उद्‌गार निकलते ही कई समाधान सामने आ जाते हैं। बड़ी-बड़ी फैक्टरियां लंबे होने के साधन निकालने लगती हैं। आय-व्यय का सिलसिला जारी हो जाता है। भौतिक संसार की यह प्रमुखता है। पर ऐसे भी लोग होते हैं जो कद छोटा करने के लिए लालायित रहते हैं।

यह द्वापर युग की बात है। पूर्व में चाक्षुष मनु को यज्ञ करते समय यज्ञकुण्ड से एक कन्या प्राप्त हुई। उसे मनु ने पाल-पोसकर बड़ा किया। वह अत्यन्त रूपमती थी। मनु ने उसका नाम ज्योतिष्मती रखा।

ज्योतिष्मती बड़ी हुई। मनु को उसके विवाह की चिंता सताने लगी।

ज्योतिष्मती सबसे बलवान से विवाह करना चाहती थी। भगवान से अधिक कौन बलवान हो सकता है। इस युवती ने घनघोर तपस्या करना आरंभ कर दिया। आकाशवाणी हुई, "तुम फिर से यज्ञकुण्ड में समा जाओ। द्वापर में तुम्हारी इच्छा पूर्ण होगी।"

मनु की आज्ञा लेकर ज्योतिष्मती यज्ञकुण्ड में समा गई। द्वापर आया। मनु वंश के प्रतापी राजा राजा रेवत पृथ्वी पर

राज्य करते थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र कुकदमी निःसंतान थे। संतान के लिए कुकदमी ने यज्ञ कराया।

यज्ञकुण्ड से ज्योतिष्मती फिर प्रकट हुई। राजा कुकदमी ने उसे अपनी पुत्री बनाया और उसका नाम रेवती रखा।

रेवती अलौकिक सुंदरी थी। वयस्क हुई। राजा को उसके विवाह की चिंता लग गई। पहले की तरह ही सबसे बलवान से वह विवाह करना चाहती थी। राजा दुबिधा में पड़ गए।

एक दिन नारदजी पधारे। उन्होंने राजा की समस्या सुनी। नारदजी ने उन्हें मधुपुरी जाने की सलाह दी। वहां सोलह कलाओं का अवतार हुआ था। वह अवतार भगवान कृष्ण का था। उनके बड़े भाई बलराम थे। वे शेषनाग के अवतार थे।

राजा ने रेवती के साथ मधुपुरी की ओर प्रस्थान किया।

श्रीकृष्ण बलराम के साथ यमुना-तट पर टहल रहे थे। कुकदमी ने उन्हें साष्टांग किया। अन्तर्यामी मुस्कुराये। वे बोले, "आप सूर्यवंश के पुण्यवान् राजा हैं। आप हमें अपनी कन्या देने आए हैं। आपकी कन्या को मैं अपने बड़े भाई बलराम के लिए स्वीकार करता हूं। आप दुविधा में न पड़ें। रेवती बलराम के कद से छोटी है।

कुकदमी असमंजस में पड़ गए। भगवान ने उनके हृदय की बात कैसे जान ली। किन्तु रेवती तो बलराम से कद में बड़ी है। फिर उन्होंने उसे कद में छोटी कैसे कहा?

फिर अन्तर्द्वन्द्व पर विजय प्राप्त कर उन्होंने रेवती का हाथ बलराम को थमा दिया। बलराम के हाथ का स्पर्श पाते ही रेवती कद में छोटी होने लगी और बलराम से कद में दो इंच छोटी हो गई।

बलराम अवतार थे। मानवीय काया का उन्हें पूर्ण ज्ञान था। अतः अपने स्पर्श से उन्होंने रेवती के हाथ की कोई ऐसी नस दबा

दी, जिससे रेवती का कद छोटा हो गया।

ऐसी नस का ज्ञान तो आज किसी योगी के लिए ही संभव है। मेरी दृष्टि में ऐसा कोई आज भी है। वह है धीरेन्द्र ब्रह्मचारी।

यद्यपि दिल्ली दरबार से अब ब्रह्मचारी जी दरकिनार हो चुके हैं। जनता में भी उनका प्रचार कम हो गया है। यदि ऐसा ही चलता रहा तो जनता धीरे-धीरे उन्हें भूलती जाएगी और एक दिन ऐसा आएगा कि उनका नामलेवा भी कोई न रहेगा।

अतः यह अवसर उपयुक्त है। ब्रह्मचारी को आगे आना चाहिए।

जन-चर्चित व्यक्ति ही राजाश्रित होता है। देखें, ब्रह्मचारी जी कब पहल करते हैं।

विदूषक ने गुप्तचर भगाया

विजयनगर के दरबार में एक विदूषक था। वह हाजिरजवाब था। अपनी क्षमता पर वह राजदरबारी था। समय-समय पर वह राजा का सलाहकार भी बना रहा। वह तेनालीराम था।

विजयनगर के राजा उस समय कृष्णदेवराय थे। विजयनगर की सीमा पर एक पहाड़ी थी। पहाड़ी की दूसरी ओर अन्य राज्य था। वह विजयनगर का शत्रु था।

अचानक शत्रु आक्रमण न कर दे, इसलिये पहाड़ी पर विजय-नगर की सेना की एक टुकड़ी रहती थी।

राजदरबार में एक दिन एक साधु आया। उसने आश्रम बनाने के लिए शहर के बाहर भूमि मांगी। साधू-संतों का राजा आदर करते थे। उन्होंने मंत्री को आदेश दिया—

"नगर के बाहर जो भूमि साधु को पसंद आये, वह उसे दे दी जाय।"

आदेश का पालन हुआ। राजा और उनके दरबारी दौरे पर निकले। पहाड़ी पर तोड़-फोड़ हो रही थी। राजा ने तोड़-फोड़ का कारण ज्ञात किया।

राजा को सूचित किया गया, "राजन्, आपके आदेश से ही साधु का आश्रम बन रहा है।"

राजा द्विविधा में पड़ गये। वे पहाड़ी के सामरिक महत्त्व को समझते थे। उन्होंने मंत्री से परामर्श किया। परामर्श के पश्चात् आश्रम-निर्माण का कार्य रोक दिया गया।

अगले दिन साधु दरबार में पुनः उपस्थित हुआ और बोला—"राजन् ! आप दयालु और सामर्थ्यवान हैं। आप ही यदि अपने वचन का पालन नहीं करेंगे तो कौन करेगा ! मुझे पहाड़ी की वह भूमि पसंद है। वहां एकांत है। साधना एकांत में ही संभव है।"

राजा फिर द्विविधाग्रस्त हो गये।

राजा को द्विविधा में पड़ा देख तेनालीराम ने खड़े होकर साधु से कहा—"महात्मन् ! आप इस भूमि को वापस लिये जाने का कुछ अन्य अर्थ न लगायें। हमारे राजन् ने यह सोचकर आपसे भूमि वापस ली है कि वहां सैनिक छावनी है और सैनिक गतिविधियों से आपको असुविधा होगी। फिर भी यदि आप वही भूमि चाहते हैं तो हमारे राजा को कोई आपत्ति नहीं है। वहां पर तैनात सैनिक टुकड़ी सीमा की सुरक्षा के अतिरिक्त आपकी भी सुरक्षा करती रहेगी।"

"ठीक है, कल जवाब दूंगा।" कहकर साधु चला गया। कल आया और चला गया। ऐसे कई कल आये और चले गये, पर साधु नहीं आया।

बाद में ज्ञात हुआ कि शत्रु सेना का वह एक गुप्तचर था।

तेनालीराम ने अपने बुद्धि-कौशल से राज्य की सुरक्षा को क्षतिग्रस्त होने से बचा लिया। ऐसे ही बुद्धिमान समय-समय पर अपने राष्ट्र की प्रत्यक्ष और मूक सेवा करते रहते हैं। प्रत्येक राष्ट्र अपने ऐसे-ऐसे बुद्धिमानों के प्रति श्रद्धानत रहता है।

रावण की हिजड़े से शादी

दक्षिण के कुछ भागों में रावण को भगवान् माना जाता है। उसकी विधिवत् पूजा की जाती है। पर रावण के चरित्र पर अभी तक बहुत कम प्रकाश पड़ा है। सीता के अपहरण से उसका चरित्र अवश्य धूमिल हुआ है, पर राजोचित कार्य की संज्ञा देकर उस अध्याय को ही समाप्त कर दिया गया है।

रावण इससे भी बढ़कर था। चरम सीमा तक, वह यौनाचारी था। इन्द्रीय सुख ही उसके लिए सर्वोपरि था। उसके प्रति वह आकर्षित था। उसी के लिये वह लालायित भी रहता था।

हिजड़े भी रावण को भगवान मानते हैं। पुराण में कथा है कि रावण नामक भगवान ने हिजड़े से विवाह रचाया था। उसे भगवान मानकर हिजड़े अपना संसार बसाते हैं।

मद्रास के पास क्वाट्टम नामक एक छोटा-सा गांव है। प्रतिवर्ष वहां हजारों हिजड़े विवाह के लिए आते हैं। औरतों के समान पोशाक धारण कर, वे इस विचित्र विवाह समारोह में सम्मिलित होते हैं।

आम जनता दशहरा, ईद, दिवाली मनाती है। हिजड़ें 'भुजली उत्सव' मनाते हैं। यह उत्सव १९ दिन तक चलता है। उत्सव के ग्यारहवें दिन, हिजड़ा बनने वाले व्यक्ति की इंद्री काट दी जाती है। प्रातःकाल से इस विधि की पूर्णाहुति की विधि आरंभ होती है। सभी हिजड़े नग्न खड़े हो जाते हैं। फिर जिस व्यक्ति को हिजड़ा किया जाता है, उससे दस बार पूछा जाता है

कि क्या उसे हिजड़ा बनना है। जब वह दस बार यह कहता है कि उसे हिजड़ा बनना है, तो पास खड़े दो हट्टे-कट्टे हिजड़े, उसे जबरदस्ती उल्टा लिटा देते हैं। तदनंतर उसके शरीर पर ठण्डा पानी डाला जाता है। उसके अंडकोष के समीप एक बारीक तागा बांध दिया जाता है। तत्पश्चात् गुरु सक्रिय होता है। वह एक धारदार हथियार लेता है। सामने खड़ी रावण की प्रशस्त मूर्ति के सामने दंडवत हो, उसके पैरों पर हथियार रख कुछ मंत्र उच्चारण करता है। फिर उस धारदार हथियार से गुरु हिजड़ा बनने वाले की 'इन्द्री' काट देता है। रक्त तेजी से बहने लगता है और उस व्यक्ति पर ठण्डा पानी तब तक डाला जाता है, जब तक वह बेहोश नहीं हो जाता।

हिजड़ों के इस उत्सव के सोलहवें दिन, प्रवेश पाने वाले हिजड़े को वधू के समान कपड़े पहनाये जाते हैं। स्त्रियों के समान भावभंगिमा से, उसे पूर्व ही में प्रशिक्षित कर दिया जाता है। अतएव उक्त भावभंगिमा करने में उसे कोई औपचारिकता नहीं निभानी पड़ती। औरतों के समान औत्सुक्य तथा हावभाव से वह अपनी मधुचंद्र की रात्रि की प्रतीक्षा करता है।

एक पंडित आता है और विधिवत् रीति से रावण की प्रशस्त मूर्ति से वह विवाह करा देता है। इस प्रकार भगवान की पत्थर की निर्विकार मूर्ति से उसका विवाह कर दिया जाता है।

निर्विकार के पश्चात् साकार की आवश्यकता होती है।

एक हट्टा-कट्टा व्यक्ति रावण का छद्मवेश धारण कर, उस हिजड़े की मधु यामिनी रात्रि आनन्दमयी बना देता है।

दूसरा दिन दूल्हा-दुल्हन के नाज-नखरों का दिन होता है। खूब गाना-बजाना होता है। हास-परिहास होता है और रात्रि को विशाल भोज होता है।

इस प्रकार हिजड़े पांच दिन की अवधि में हिजड़ा बने उस

व्यक्ति का खून रोकने से लेकर उसका घाव तक भी सुखा देते हैं। वह कौन-सो विधि और औषधि का प्रयोग करते हैं, यह अज्ञात है।

यदि हिजड़े स्वयं मानव हैं और मानवता से प्रेरित हैं तो उक्त विधि और औषधि को जनहित के लिए प्रकाश में ला देना चाहिये। दिल्ली प्रदेश हिजड़ा कल्याण सभा के अध्यक्ष, श्री खैरातीलाल भोला, संयुक्त राष्ट्र और विश्व के सभी देशों के राष्ट्राध्यक्षों से मानवीय आधार पर, हिजड़ों के संबंध में, निर्णय होने की बार-बार अपील करते हैं। क्या अच्छा होगा यदि वे उक्त विधि और औषधि को, जन-कल्याण के लिए प्रचारित कर दें।

इस प्रकार, यौनाचारी रावण का उसकी निर्विकार मूर्ति से विवाह किया जाकर, उसके यौनाचार की निरंतर पुष्टि की जाती है। हिजड़े उसमें अग्रणी हैं, क्योंकि रावण ने एक हिजड़े से विवाह किया था।

वह जापानी तोप

वह जापानी तोप थी। सन् १९०५। रूस-जापान युद्ध अपनी चरम सीमा पर था।

पोर्ट आर्थर (चीन) पर जापानियों को कब्जा करना अनिवार्य हो गया।

इस तोप का उसमें प्रयोग किया गया था।

इस तोप के मुंह का व्यास नौ इंच है। मीलों की दूरी तक गोला फेंकने की इसमें क्षमता है। लगभग ३५ सैनिक और अफसर इसका संचालन करते हैं। इस तोप का वजन कई टन है। यह बहुत भारी है।

सन् १९३१। अफीम का व्यसनी समस्त चीन था। फौज भी इससे अछूती नहीं थी। फौजी जनरल चांगशू लियांग रात-दिन अफीम के नशे में चूर रहता था। उसके नशे के लिए फौजी अफसर विकते थे।

चीन में भ्रष्टाचार उस समय चरम सीमा पर था।

जापान को मंचूरिया पर कब्जा करना था। मंचूरिया की राजधानी मुकदेन के मध्य उन्हें दूर मारवाली इस तोप को स्थापित करना था।

जुलाई, १९३१। मुकदेन में तैरने की एक विशाल योजना जापानियों ने बनाई। तोप को जापानियों ने टुकड़ों में विभाजित किया और मोटर गाड़ियों में लादकर उन्हें मुकदेन ले गए।

तालाब का कार्य आरम्भ किया जाना था। जापानियों ने

एक विशाल शामियाना ताना और टुकड़ों को जोड़कर तोप स्थापित कर दी। उस तोप को स्थापित करने में जापानियों को ११ मीटर लंबी और चौड़ी भूमि का इस्तेमाल करना पड़ा था और एक मीटर गहरी नींव खोदनी पड़ी थी। नींव को ठोस कांक्रीट और लोहे के टुकड़ों से भरा गया था।

१८ सितम्बर, १९३१। जापानी जनरल हौन्जो ने आदेश दिया। तोप ने आग उगलना आरम्भ कर दिया। मीलों दूर निशानों पर गोले गिरे। दक्षिणी हवाई अड्डे पर तैनात सैनिकों, विमानों, रेल-स्टेशनों, पुलों और सड़कों का मिनटों में सफाया हो गया।

युद्ध दिन-भर चलता रहा। पर तोप के वेग के सामने चीनी फौजें टिक न सकीं। जापानियों ने मध्य मंचूरिया पर कब्जा कर लिया।

दूसरा विश्वयुद्ध। भारत का पूर्वी क्षेत्र। बर्मा का अराकान मोर्चा। जापानी जनरल किमूरा, टोकियो जनरल हेड क्वार्टर्स से उक्त तोप की मांग करते हैं। अकस्मात युद्ध समाप्त हो जाता है। इस तोप के लिए जनरल की मांग, मांग ही रह जाती है।

तो वह जापानी तोप थी।

डॉक्टर फारूक अब्दुल्ला

डॉक्टर आशीर्वादीलाल के अनुसार, सन् १८३७ में अंग्रेज मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर की उपेक्षा करते थे तथा उसे पेंशन देना बन्द कर दिया था। उन्होंने उसे दिल्ली का दुर्ग खाली करने का आदेश दे दिया था। अतः बहादुरशाह क्रान्तिकारियों का सहयोगी बन गया।

सन् १८५७ की क्रांति असफल रही। अंग्रेजों ने मुसलमानों से सत्ता छीन ली। इसके पूर्व मुसलमान शासक वर्ग के सदस्य थे। हुनर और तिजारत में हैसियतदार थे। सत्ता में आने पर अंग्रेजों को उनकी हैसियत नागुजार लगी और सर्वप्रथम उन्होंने उनके धन्धे नष्ट कर दिए।

सन् १९०६। अंग्रेजों ने मुस्लिम लीग की स्थापना करवाई। उन्होंने मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध उकसाया। मुसलमान किसान खेती करता रहा। छोटे-छोटे धंधे वाले मुसलमान कारीगर बेकार हो गए। उस समय कारीगरी और हुनर का काम करने वाले ९९ प्रतिशत कामगार मुसलमान थे। लेकिन उनकी तकलीफें सुनने वाला कोई नहीं था। मुस्लिम लीग की स्थापना से और अंग्रेजों से शह पाकर, मुसलमान नेता मुसलमानों कों घटिया से घटिया मुद्दों से जोड़ते रहे। उनकी कब्रों की हिफाजत के नाम पर, नमाज पढ़ने के नाम पर, उर्दू के नाम पर शोशेबाजी कर, उन्हें गुमराह करते रहे। फलस्वरूप, देश का मुसलमान निर्धनता, अशिक्षा और बेरोजगारी में सिमटता चला गया। लखनऊ की

चिकन, काश्मीर की शाल, बनारस की साड़ी, भदोही के कालीन, भागलपुर का हथकरघा, बंगाल की शांतिपुरी साड़ी, बीदर के नक्काशीदार बर्तन, जलेसर की घंटी, भोपाल के बटुए, अलीगढ़ के ताले, आगरा की दरी, पीतल के मुरादाबादी बर्तन, सींग का सरायतरीन का काम, सहारनपुर का शीशम का काम—सब बाजार से गायब हो गए।

मुसलमान कारीगर को सामाजिक न्याय नहीं मिला। वह उपेक्षित रहा। आत्महीनता की बदबू समेटकर निर्धनता में वह तड़पता रहा। उसे उसके किसी नेता से सहारा नहीं मिला। जिन्ना, इमाम बुखारी, सैयद शाहबुद्दीन जैसे आभिजात्य वर्ग के नेता उसकी भलाई नहीं कर सके। इसके विपरीत, शेख अब्दुल्ला ने काश्मीर के मुसलमानों के लिए भूमि सुधार किए, मुसलमानों में प्रचलित परदा प्रथा को समाप्त कर उनकी लड़कियों को बिना बुरके के स्कूल और कॉलेजों में भिजवाया। इससे उनमें आत्म-विश्वास जागा। शेख अब्दुल्ला जैसे समाज-सुधारक नेताओं की आज के मुसलमानों को जरूरत है। पर शेख साहब दिवंगत हो गए। उनके पश्चात् उनके पुत्र डॉक्टर फारूक अब्दुल्ला सामने आए।

६ अगस्त, १९८३ को पूना (महाराष्ट्र) में युवा राजनीतिक सम्मेलन आयोजित कर उसमें डॉक्टर फारूक अब्दुल्ला को निमंत्रित किया गया। उनके पूना पहुंचने पर उग्रवादी हिन्दू संगठन, 'पतित पावन संघटना' ने उन्हें काले झंडे दिखाए। डॉक्टर साहब ने सम्प्रदायवादियों (हिन्दू और मुसलमान) का मजाक उड़ाते हुए कहा कि वे समझते हैं कि हिन्दुस्तान केवल उनका और उनके बाप का है। उनका यह सोचना गलत है। हिन्दुस्तान हम सबका है। मेरा है। आपका है।

आम सभा में 'पतित पावन संघटना' के कार्यकर्ताओं ने उन

पर पत्थर, सांप और चप्पलें फेंकीं। पर डॉक्टर साहब जरा भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने कहा, यह कहां का इन्साफ है। आप मेरी बात को नहीं सुनोगे और चप्पलें भी मारोगे। मैं हिन्दुस्तानी था, हूं, और रहूंगा। जो आज मुझ पर पाकिस्तानी होने का आरोप लगाते हैं, वे जाएं और पाकिस्तान से अपना हिस्सा वापस लें। मैं तो बार-बार यही कहता हूं कि पाकिस्तान के पास काश्मीर का जो हिस्सा है, वह भी हिन्दुस्तान का है। वहां के लोग भी हिन्दुस्तानी हैं? आप लोग तो यहां हैं। मैं काश्मीर में हूं। वहां मेरे एक ओर चीन है, दूसरी ओर पाकिस्तान है। पर आपके सामने आज यह वायदा करता हूं कि कोई भी विदेशी आक्रामक यहां तक तभी पहुंचेगा जब आखिरी काश्मीरी मारा जाएगा।"

डॉक्टर फारूक अब्दुल्ला के साथ डॉयस पर चंद्रशेखर, हेमवतीनंदन बहुगुणा, शरद पवार, चंद्रजीत यादव, मोहन धारिया जैसी हस्तियां भी बैठी थीं। डॉक्टर साहब ने भाषण समाप्त करते ही उपस्थित जनसमूह से 'जयहिन्द' का नारा लगवाया। जनसमूह ने 'जयहिन्द' के अलावा 'शिवाजी महाराज की जय' और 'फारूक अब्दुल्ला जिंदाबाद' के नारे भी लगाए।

हिन्दू सम्प्रदायवादियों के मुंह पर यह एक करारा तमाचा था।

और डॉक्टर फारूक अब्दुल्ला?

एक भारतीय जासूस, अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में

ब्रिटिश सरकार को भय था कि रूस, हिरात और कंधार के रास्ते से होता हुआ, भारत पर आक्रमण न कर दे। इस उद्देश्य से लॉर्ड आकलैण्ड ने, अफगानिस्तान के शासक दोस्त मुहम्मद के पास एक पत्र, अलेक्जेण्डर बेकर्स के मारफत भेजा।

दोस्त मुहम्मद ने शर्त रखी कि यदि अंग्रेज, रणजीतसिंह से कंधार छीनने में उसकी मदद करें तो वह रूस से गठबंधन नहीं करेगा। अंग्रेज रणजीतसिंह से मित्रता रखना चाहते थे। अतः उन्होंने शर्त नहीं मानी। इस पर दोस्त मुहम्मद ने रूस से संधि कर ली।

अत: लॉर्ड आकलैण्ड ने, दोस्त मुहम्मद को हराकर, अफगान के सरदार शाहशुजा को गद्दी पर बिठाने की योजना बनाई। रणजीतसिंह से सहायता ली गई। दर्रा बोसान और पेशावर तथा खैबर की ओर से अंग्रेज सेना आगे बढ़ी। कंधार, गजनी और काबुल जीतकर, दोस्त मुहम्मद को कैद कर लिया गया। तत्पश्चात् उसे कलकत्ता भेज दिया गया।

सन् १८५७ की असफल क्रांति के पश्चात्, भारत में, अंग्रेजों के उखड़ते कदम मजबूती से जम गए थे। अंग्रेज रूस से भयभीत थे। रूस के आंतरिक हालात के बारे में वह जानना चाहते थे। अतः उन्होंने इन्दौर नरेश को अपने विश्वास में लिया। उस समय, सेंट्रल एजेंसी का गठन हो चुका था। उसका हेडक्वार्टर इन्दौर था। मेरे पिता, ठाकुर बेनीमाधोसिंह, सेंट्रल इंडिया एजेंसी की पुलिस में, सब-इन्सपेक्टर थे। तत्कालीन इंदौर नरेश ने एक प्रतिनिधि-मंडल का गठन किया। उसका उद्देश्य, रूस की

आंतरिक परिस्थिति का जायजा लेना था। सिविलियन का उस प्रतिनिधि-मंडल से कोई साबका नहीं था।

मेरे पिता को प्रतिनिधि-मंडल में शरीक कर, उसका नेतृत्व उनके हाथ में सौंप दिया। यह सन् १८६६ का वाकया है। प्रतिनिधि-मंडल रवाना हुआ और लाहौर, पेशावर, काबुल, बामियान तथा बलख होते हुए वह रूसी तुर्किस्तान पहुंचा। सन् १८६६ समाप्ति पर था। प्रतिनिधि-मंडल कारशा पहुंच चुका था। कारशा बुखारा में था। रूस और बुखारा में उस समय वैमनस्य चल रहा था। बुखारा के अधिकारियों को संदेह हुआ। मंडल के सदस्यों की तलाशी ली और उनके कागजात जप्त कर लिये गये।

मेरे पिता के पास एक कोरा कागज भी था। बुखारा के अधिकारियों ने उसे सिर्फ कोरा कागज समझा और उस पर खयाल नहीं किया। तत्पश्चात, उन्हें आगे बढ़ने की इजाजत दे दी गई। उन्होंने बुखारा पार किया। रूस की सीमा में दाखिल हुए और रूस के सेनापति के पास पहुंचे। रूसी सेनापति उस समय ए० के० अव्रामोव थे। सेनापति ने मेरे पिता की बातों को ध्यान से सुना और सुनने के बाद, उन लोगों को ताशकंद पहुंचा दिया।

ताशकंद में सैनिक गवर्नर था। मेरे पिता की बातों में वह भी आ गया। उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि वह, वास्तव में, भारत से आये थे और इंदौर नरेश ने उन्हें भेजा था। प्रमाण में उन्होंने भारत से ताशकंद मार्ग का एक रेखा-चित्र भी बनाकर प्रस्तुत कर दिया। तत्पश्चात् इंदौर नरेश के पत्र को प्रस्तुत किया। वह एक कोरा कागज था। जब धुएं पर उसे रखा गया तो अक्षर स्पष्ट हो गये।

रूसी अधिकारियों को संदेह हो गया। उस तरह की स्याही का प्रयोग केवल यूरोप में होता था। फिर भी पत्र को पढ़ा गया। पत्रवाहक को, पत्र में अत्यंत विश्वसनीय व्यक्ति प्रतिपादित

किया गया था। रूस और भारत में व्यापारिक संबंध कायम करने के लिये जोर दिया गया था। यह पढ़कर रूसी अधिकारी चौंक गये। भारत की आंतरिक स्थिति का उन्हें ज्ञान था।

मेरे पिता के पास इंदौर, हैदराबाद, बीकानेर, जोधपुर, जयपुर और अन्य देशी नरेशों तथा रूस सरकार के मध्य होने वाले एक समझौते का दस्तावेज भी था। उसमें कहा गया था कि भारत में रूस सरकार अपनी सेना भेजे और उसका सारा व्यय भारत के देशी नरेश वहन करेंगे।

जार सरकार को संदेह हो चुका था। पर, प्रतिनिधि-मंडल से उसने कुछ नहीं कहा। उसने उसका भरपूर स्वागत किया। प्रस्ताव उसने अमान्य कर दिया। पर मेरे पिता का उद्देश्य पूरा हो चुका था। रूस की आंतरिक व्यवस्था का उन्होंने ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

इस प्रकार की जासूसी करने वाले मेरे पिता प्रथम भारतीय थे। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उन्होंने जासूसी की थी। और वह एक भारतीय की प्रथम जासूसी थी।

१४ सितंबर, १८६७ को प्रतिनिधि-मंडल के साथ मेरे पिता भारत लौट आये। खोजन्द और खोकन्द होते हुए वे काश्मीर पहुंचे थे। भारत के उस प्रथम अंतर्राष्ट्रीय जासूस ने भारत आकर हुकूमत को अपनी रिपोर्ट सौंप दी।

रूस की सीमा को पार करने वाले, मेरे पिता सर्वप्रथम भारतीय जासूस थे। यह सन् १८६७ की बात है। लगभग ११० वर्ष के पश्चात् उनके छोटे पुत्र ने रूसी सीमा पार की। उनका नाम ठाकुर विश्वनारायण सिंह है। देहरादून के ब्रेल प्रेस में वह संपादक हैं। सोवियत लैण्ड नेहरू अवार्ड विनर हैं।

पिता जासूस होकर गया था और उसका पुत्र, मित्रता और सद्भावना का संदेश लेकर गया था। प्रकृति की पुनरावृत्ति का यह एक अनोखा नमूना था।

गुप्तकालीन सांस्कृतिक जीवन-झांकी विद्वानों की दृष्टि से

गुप्तकाल भारतीय संस्कृति का स्वर्ण-युग था। चीनी यात्री फाह्यान ने भी इस युग की मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी। डॉक्टर भगवत् शरण उपाध्याय के शब्दों में—

"दीर्घजीवी सम्राट ने इस युग में शास्त्रों को आदर्श बनाकर, उनके आदर्शों का अनुकरण किया। दिग्विजय, अश्वमेध आदि का अनुष्ठान कर उन्होंने भारतीय धरा को एक छत्र के नीचे लाने का सफल प्रयास किया और दीर्घकाल तक उस पर पिता तुल्य शासन किया।"

राजनीतिक दृष्टि से गुप्तकाल साम्राज्यवादी युग था। इस युग में भारत को एक सूत्र में पिरोकर एकछत्र शासन की व्यवस्था की गई। साम्राज्यवादी होते हुए भी शासक व्यावहारिक थे। विजित राज्यों को उन्होंने अपने साम्राज्य में नहीं मिलाया। उन राज्यों को उनके शासकों को वापस देकर उन्होंने अपने साम्राज्य के चारों ओर मित्र-राज्य कायम किये। इससे उनकी सार्वभौमिकता अक्षुण्ण बनी रही।

सम्राट देवतुल्य अवश्य था पर वह प्रजा का ऋणी था। श्रेष्ठ शासन प्रदान कर और जनता को सुखी कर ही वह प्रजा के ऋण से मुक्त हो सकता था। धर्मसम्मत आचरण राजा के लिए अनिवार्य था। शांति और व्यवस्था बनाये रखना उसका प्रमुख कर्त्तव्य था। युद्ध काल में सम्राट सैन्य-संचालन स्वयं करता था।

शासन-नीति-निर्माण में उसका पूरा योगदान रहता था। न्याय के क्षेत्र में वह सर्वोच्च न्यायाधीश था। उसका निर्णय अंतिम निर्णय होता था।

मंत्रिपरिषद् सम्राट की सहायता करती थी। सम्राट को वह परामर्श देती और कर्तव्य-पालन में सहयोग देती थी। गुप्त-साम्राज्य का स्वरूप मांडलिक था। अनेक राजा उपहार भेजकर अपनी अधीनता प्रकट करते थे।

गुप्तकाल में सेना विशाल और सुसंगठित थी। हाथी, घोड़े और पैदल उसके प्रधान अंग रहते थे। दक्षिण के राज्यों के लिए नौसेना भी थी। सेना में सभी जाति के लोग भरती हो सकते थे।

देश की आंतरिक रक्षा के लिए सर्वोच्च पदाधिकारी दंडाधिकारी होता था। दांडिक, दंडपाशिक, रक्षक आदि उसके सहायक होते थे। गुप्तचर व्यवस्था भी थी। वह नितांत उसके अधीन रहती थी।

सम्राट का निर्णय सर्वोच्च तथा सर्वोपरि था। प्रांतों में न्यायाधीश नियुक्त थे। गांव में न्याय करने का कार्य ग्रामसभा के सहयोग से एक न्यायाधिकारी करता था। दक्षिण में जूरी प्रथा प्रचलित थी। राज्य में प्राणदंड का संपूर्ण निषेध था।

सड़कों का निर्माण, सिंचाई की समुचित व्यवस्था, नई झीलों तथा पोखरों का निर्माण, पुरानी झीलों का जीर्णोद्धार, औषधालयों एवं चिकित्सालयों का निर्माण तथा व्यवस्था करना सम्राट का प्रमुख ध्येय था। शिक्षा की समुचित व्यवस्था थी। विद्वानों को राजकीय सहायता प्रदान की जाती थी। धर्मशालाएं प्रचुर तथा व्यवस्थित थीं।

राज्य का प्रमुख कर भूमि-कर था। चुंगी भी राजकीय आय का एक साधन था। जंगलों, चरागाहों, नमक की खानों से भी राज्य को आय होती थी। अपराधियों पर किया गया जुर्माना

भी राज्य की आय का साधन था। विशेष कर आपत्तिकाल में लगाये जाते थे।

वैदिक और बौद्ध जनता में वैमनस्य नाम मात्र को रह गया था। जाति-व्यवस्था विद्यमान थी। अन्तर्जातीय विवाह प्रचलित थे। क्षत्रिय गुप्त सम्राटों ने ब्राह्मण वाकाटक सम्राटों से विवाह संबंध स्थापित किये थे। विधवा विवाह भी होते थे। बहु विवाह भी होते थे। स्त्रियों को मान-सम्मान प्राप्त था। वंशावली में माता-पिता दोनों का उल्लेख होता था। सम्मिलित कुटुम्ब प्रथा प्रचलित थी। विधवाओं के लिए जीवन-वृत्ति की व्यवस्था थी।

जनता अधिकतर शाकाहारी थी। भोजन के उपरांत पान का सेवन किया जाता था। पुरुष अधिकतर धोती पहनते थे। स्त्रियां साड़ियां पहनती थीं। जुआ, मृगया और आखेट, आमोद-प्रमोद के साधन थे। उस काल में मुर्गे तथा भेड़ के युद्ध अत्यंत प्रसिद्ध थें।

कृषि के अतिरिक्त वस्त्र बुनना, शिल्प, हाथीदांत का कार्य, चित्रकला, नौका-निर्माण आदि उस काल के मुख्य व्यवसाय थे। व्यापार विदेशों से भी होता था। इसके लिए बंगाल का मुख्य बंदरगाह ताम्रलिप्ति अत्यन्त विख्यात था। इसके द्वारा चीन, लंका, सुमात्रा, जावा आदि देशों से व्यापार होता था। पश्चिमी देशों से व्यापार के लिए कल्याण, भड़ौंच तथा खम्भात बंदरगाह थे। विनिमय में कौड़ियां प्रसिद्ध थीं।

वैदिक धर्म की इस काल में उन्नति हुई। पौराणिक धर्म भी लोकप्रिय था। सभी को अपने धर्म के पालन की स्वतंत्रता थी। धर्म के नाम पर पक्षपात नहीं किया जाता था। इस काल में संस्कृत भाषा का पुनरुत्थान हुआ। इसी काल में उच्चकोटि के विद्वान और साहित्यकार भी हुए। उनमें प्रमुख हैं—

(१) **कालिदास :** इनकी रचनाएं हैं—रघुवंश, कुमार संभव,

मेघदूत, अभिज्ञान शाकुन्तलम, विक्रमोर्वशी तथा मालविकाग्निमित्र।

(२) **विशाखदत्त :** 'मुद्राराक्षस' इनकी सर्वाधिक विख्यात एवं प्रमुख कृति थी।

(३) **अमर सिंह :** रचना है, अमरकोष।

(४) **धन्वंतरि :** ये वैद्य के रूप में विख्यात हुए।

(५) **आर्यभट्ट :** ये वराहमिहिर तथा ब्रल्द गुप्त के रूप में ज्योतिषी एवं गणितज्ञ हुए।

पुराण-स्मृतियों का इस काल में पुनरुद्धार हुआ। शुद्ध भारतीय कला का इस युग में विकास हुआ।

स्थापत्य कला ने सारनाथ, अजंता और एलोरा की गुफाएं इस काल में प्रदान कीं। देवालयों एवं मंदिरों का निर्माण इस युग में अत्यधिक हुआ। जिनमें प्रसिद्ध हैं लालखां मंदिर, भीतरगांव का मंदिर (कानपुर के निकट), दशावतार मंदिर (देवगढ़), बोधगया का दशावतार मंदिर। इनका मूर्ति-निर्माण भी भारतीय शैली पर हुआ। ये मूर्तियां और मंदिर अपनी भव्यता में अनुपम थे।

इस काल में नाट्यकला का भी विकास हुआ। रंगमंच समुन्नत स्थिति में था।

संक्षेप में, जीवन के सभी क्षेत्रों में समूचा देश विकास के पथ पर अग्रसर था। निस्संदेह वह स्वर्ण-युग था।

आज के भारत में उस युग की बहुत-सी समानताएं हैं। केवल भारत में 'प्राणदंड' की व्यवस्था अखरती है। विद्वानों के विरोध के बावजूद भी भारत में 'प्राण-दंड' दिये जाने की व्यवस्था है। क्या ही अच्छा होता यदि इसका उन्मूलन कर दिया जाता।

यदि ऐसा हो गया तो भारत में भी स्वर्ण-युग का प्रारंभ हो जाएगा। देखना है, कब ऐसा होता है।

राजा की पूजा होती—वह जल-वर्षा करता था

प्राचीन मिस्री जनता वहां के राजाओं की पूजा करती थी। वह जल-वर्षा करते थे। हरियाली और समृद्धि लाते थे। 'साइंस टुडे' में एक लेख प्रकाशित हुआ है। उसके जनक आस्ट्रिया के एक शोध छात्र 'हरमान वाल्ड हाउजर' हैं। उनके अनुसार पिरामिड प्राचीन काल के वाटर रिसरवायर थे। वे महान पिरामिड जल-निकास के केन्द्र-संग्राहक, वाष्प उत्पन्न करने वाले और जल-वर्षा करने के साधन थे।"

१८वीं शताब्दी तक मिस्र के पिरामिड अज्ञात रहे। नेपोलियन महान ने मिस्र में कदम रखे और वहां के पिरामिड चर्चा का विषय बन गए।

४५० ई० पूर्व। हेरोडोटस ने पिरामिडों पर शोध किया। उनके अनुसार पिरामिडों के आसपास झील थी। उस झील में नीलनदी का जल था।

सन् १९६२। मिस्र का पिरामिड (एक) झुकने लगा। जांच-पड़ताल के लिए शासन की ओर से एक प्रोफेसर नियुक्त किए गए। जांच-पड़ताल चल रही थी। एक गीला पत्थर दृष्टिगोचर हुआ। उसकी बनावट विशेष प्रकार की थी। उत्सुकता जागृत हुई। उसे हटाया गया। हटाने पर एक सुरंग मिली। सुरंग में थोड़ी दूर चलने पर स्फटिक जल के दर्शन हुए। हरमान वाल्ड हाउजर ने विश्लेषण-अध्ययन किया। सन् १९७७ में वह मिस्र गए। एक पिरामिड में उन्होंने प्रवेश किया। वहां उन्हें जल-स्तर

का चिह्न दृष्टिगोचर हुआ। फिर उन्होंने दिवार की खुरचन हस्तगत की। आस्ट्रिया में उसकी रासायनिक जांच कराई। उसमें नीलनदी की मिट्टी भी प्राप्त हुई। तत्पश्चात उन्होंने पानी की खांचेदार नाली की रंगमय तह पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उन्होंने प्रयोग किए। वाष्प के रूप में पिरामिड से पानी उड़ाने, तदनन्तर जल के रूप में उसकी वर्षा करने में वह सफल हुए। यह सफलता उनके प्रयोगों की सफलता सिद्ध हुई। पिरामिडों की उपयोगिता का उन्हें ज्ञान हो गया था।

उनका अध्ययन चलता रहा। उन्हें यह भी ज्ञात हुआ कि पिरामिड जल को अवरुद्ध कर उसका दबाव आसानी से बरदाश्त कर लेते थे। जल की निकासी पिरामिड के निचले भाग से होती थी। ऊपरी भाग में वायु के प्रवेश की व्यवस्था थी। इस तरह पिरामिड की बाह्य सतह से जल को वाष्प के रूप में उड़ाया जाता था। इस प्रकार उड़ाये जाने से वायु की गति-ऊर्जा में वृद्धि होती थी। उससे जल का परिवर्तन बादल के रूप में हो जाता था। इन पिरामिडों के ऊपर और नीचे जल खींचने के केन्द्र होते थे। निचले केन्द्र का समावेश एक विशाल संग्राहक से होता था।

पिरामिड में, गीली और सूखी दोनों प्रकार की अवस्थाएं रहती थीं। सूखी अवस्था में केवल गरम हवा बहती थी। गीली अवस्था में जल को वाष्प के रूप में उड़ाया जाता था। वाष्प के उड़ने से बादल निर्मित होते थे। तदनंतर वह जल-वर्षा करते थे। हरमान ने ऊर्जा का अध्ययन भी किया था। उनके अध्ययन से उन्हें ज्ञात हुआ कि गीली अवस्था में ५०० मेगावाट के बराबर ऊर्जा होती थी।

इससे हमें ज्ञात होता है कि उस समय के वैज्ञानिकों को जल के उड़ने और उसके जमने का ज्ञान था। उन्हें यह भी ज्ञात था क वर्षा का होना वातावरण में ऊंचाई पर भारी नमी से संभव

होगा। यही कारण था कि कृत्रिम वर्षा करने में वह सक्षम थे। इसके अतिरिक्त इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि आम जनता के सम्पर्क में तत्कालीन वैज्ञानिक नहीं रहते थे। यह भी निष्कर्ष निकलता है कि उनका सम्पर्क केवल राजा से रहता था। राजा उन्हें केवल अपनी सार्वभौमिकता के लिए ही इस्तेमाल करता था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस समय की जनता अज्ञानी और जाहिल थी। राजा ही उसका सर्वोपरि था। उसे अन्य बातों से कुछ भी लेना-देना नहीं था। जब वर्षा नहीं होती थी, अकाल पड़ने लगता था, तब राजा से जनता गुहार करती थी और राजा, जल-वर्षा कर देता था।

अनावृष्टि से जनता को राहत मिलती थी और वह राजा की पूजा करती थी।

'लेसर किरणें' क्या हैं ?

लेसर किरण का हिन्दी पर्याय मैं, मृत्यु-किरण उचित समझता हूं। अंग्रेजी तकनीकी भाषा में, इन्हें 'एल० टी० एम० आर०' कहा जाता है। यह एक संयत्र होता है। इस उपकरण के दो भाग होते हैं। एक बम के पिछले भाग में लगा रहता है, दूसरा बम के अगले भाग से जुड़ा रहता है। अगले भाग में चार पंखुड़ियां लगी रहती हैं। इसके दिशा-परिवर्तन से बम उड़ता है। वहीं लेसर किरणें भी रहती हैं। इन किरणों की गति प्रकाश की गति है। ये जमीन पर अपने लक्ष्य से टकराकर जाती हैं। वापस आकर ये बम में लगी पंखुड़ियों से टकरा जाती हैं। बम के पिछले भाग में रखा गया संयंत्र पंखुड़ियों के उड़ते हुए बमों को इस प्रकार मोड़ देता है कि बम सीधा अपने लक्ष्य की ओर चल देता हैं। २०-२५ हजार फुट की ऊंचाई से यदि कोई हवाई जहाज बम गिराये तो इतनी ऊंचाई से गिरते-गिरते बम अपना लक्ष्य स्वयं ढूंढ़ लेता है। सीधा आकर उससे टकरा जाता और उसे नष्ट कर देता है।

शांति के क्षेत्र में भी लेसर किरणें अपना योगदान दे रही हैं। यदि किसी के नेत्रों का रेटीना उखड़ जाता है तो लेसर किरणों की मदद से उसे चिपकाया जा सकता है। इनका प्रकाश यदि फौलाद की चादरों पर डाला जाये तो वे मोम के समान पिघल जाती हैं। इराक में भारतीय मंत्री इन्हें वहां के निर्माण में इसका प्रयोग कर रहे हैं। दूर संचार व्यवस्था या आधुनिक बड़े-बड़े नगरों की कम्प्यूटर-चालित ट्राफिक व्यवस्था में लेसर किरणों

का प्रयोग आज उपयोगी सिद्ध हो रहा है। वीडियो रिकार्डरों में 'लेसरडिस्क' ने क्रांति ला दी है। रिकार्डिंग द्वारा रंगीन दूरदर्शन में इसने कमाल कर दिया है।

अपोलो यात्री चंद्रमा पर उतरे। पृथ्वी से चंद्रमा की दूरी अनिश्चित है। दूरी निर्धारण करना है। एक नायाब तरीका सोच निकाला गया। चंद्रमा पर उतरकर यात्रियों ने वहां के धरातल पर, एक विशाल दर्पण रख दिया। पृथ्वी से उस दर्पण पर लेसर किरणें निरंतर फेंकी जा रही हैं। किरणें उससे टकराकर फिर से वापस आ जाती हैं। किरणों के जाने और आने की अवधि का आकलन कर चंद्रमा से पृथ्वी की दूरी के निर्धारण का प्रयास किया जा रहा है।

युद्ध के क्षेत्र में भी ये किरणें उपयोगी सिद्ध हो रही हैं। शत्रु के प्रक्षेपास्त्रों के दिशा-निर्देशन को भ्रमित कर उन्हें ये नष्ट कर सकती हैं। अंतरिक्ष में उपग्रहों को जला देने की इनकी क्षमता को विकसित कर लिया गया है। लेसर उपकरणों में एक्स-किरणों को भरकर दुश्मन की पनडुब्बियों में छिपाये गये प्रक्षेपास्त्रों को उनसे नष्ट किया जा सकता है।

जिस प्रकार टॉर्च की बैटरी में बल्ब के पीछे रिफ्लेक्टर लगाकर प्रकाश को एक स्थान पर केंद्रित कर दिया जाता है, उसी तरह लेसर उपकरणों में भी प्रकाश-पुंज के विकिरण को एक स्थान पर केंद्रित कर दिया जा सकता है।

अभी लेसर किरणों के प्रभाव-क्षेत्र की परिधि तीन मील की ही है। भविष्य में इस परिधि में वृद्धि हो सकती है। फिलहाल तीन मील की परिधि में इसमें किसी भी वस्तु को नष्ट कर देने की अद्भुत क्षमता है।

इसलिये मैंने इसे, मृत्यु-किरण कहा है। मेरे खयाल में, मृत्यु-किरण 'लेसर किरण' का उपयुक्त हिन्दी पर्यायवाची शब्द है।

फाकलैण्ड युद्ध—नये-नये तरीके

फाकलैण्ड युद्ध जोर-शोर से चल रहा था।

अर्जेन्टाईना फौजें, अंग्रेजी फौजों पर हावी हो रही थीं।

विजयी अर्जेन्टाईना फौजों ने, अंग्रेजों का आधुनिकतम जहाज सेफील्ड डुबो दिया।

'एक्सोमेट' मिसाइलों की गहरी मार से वह डूबा था।

अंग्रेजों के हौसले पस्त हो गये। ऐसे में उन्होंने मृत्यु-किरण या लेसर किरण का सहारा लिया।

वियतनाम युद्ध में मृत्यु-किरण अपनी ख्याति अर्जित कर चुकी थी। पेव्वे-१ नामक उपकरण में वह उनका सफल परीक्षण था।

दुश्मन के सामरिक महत्व के पुलों को उन्होंने उड़ा दिया था।

यह बात दूसरी है कि अमेरिका असफल रहा।

वियतनामी जनता के मनोबल के कारण अमेरिका वियतनाम में असफल हुआ था।

दिनांक १३ जून। अंग्रेजों ने निर्धारित गति से दो हेरियर विमानों को उड़ाया। दिशा दुश्मन की फौजों की ओर थी। निर्धारित समय पर विमानों से बम गिरा दिया गया। इधर, माउण्ट हेरियर, अंग्रेजों के लिए वरदान सिद्ध हुआ। उसकी ओट लेकर हेरियर विमान उड़ाये गये थे। राडार उन्हें पकड़ने में असफल रहे।

पहला बम निशाने पर नहीं गिरा।

फिर, पर्वत के पीछे से बम उड़-उड़कर अर्जेन्टाईना की फौजों पर गिरने लगे। बमों का उड़-उड़कर आना एक चमत्कार था—एक जादुई चमत्कार।

अर्जेन्टाईना की फौजें हतप्रभ होकर, खड़ी-खड़ी तमाशा देखती रहीं। बम गिरते रहे। वे नष्ट होती रहीं।

और ब्रिटिश गुप्तचर आंखों देखा हाल अपने केन्द्र को प्रसारित करते रहे। अंग्रेजों ने अपने चमत्कार को 'एनकैश' किया। प्रचार का सहारा लिया गया। गोबेल्स को भी मात कर दिया। अंग्रेजी प्रसारण केन्द्र सक्रिय हो गये। प्रसारण कोड भाषा में न होकर, विशुद्ध अंग्रेजी में हो रहे थे। फौजियों के घरों पर अमुक वक्त, अमुक दिन बम गिराये जाने का धुआंधार प्रचार किया गया।

लेसर बम की परिधि सिर्फ तीन किलोमीटर क्षेत्र की होती है। अंग्रेजी फौजें फोर्ट स्टेनले के मुख्य कमान हेडक्वार्टर से पर्याप्त दूर थीं। बम की परिधि से फौजियों के घर दूर थ। पर बमों का उड़-उड़कर आना और गिरना वे देख चुके थे। अत: प्रसारण उन पर हावी हो गया। प्रसारण को उन्होंने सत्य मान लिया। अर्जेन्टाईना फौज में दहशत फैल गई। घर-द्वार, बाल-बच्चों का विनाश उनकी आंखों के सामने नाच गया। उनमें हड़कम्प मच गया। भय और आतंक का माहौल छा गया। फौजियों ने लड़ाई आगे जारी रखने से इन्कार कर दिया। फौजी कमांडर असमंजस में पड़ गये।

उधर ब्रिटिश गुप्तचर सक्रिय थे। मिनट-मिनट की खबरें वे अपने केन्द्र को भेज रहे थे। लोहा गरम था। अंतिम चोट करना था। ब्रिटिश प्रसारण ने अंतिम चोट कर दी। प्रसारण सुना गया: "उड़ते बम अर्जेन्टाईना के फौजियों के घरों की ओर शीघ्र

उड़ाये जा रहे हैं।"

चमत्कार हुआ। अर्जेन्टाईना कमांडरों के हौसले भी पस्त हो गये। उसी क्षण उन्होंने निर्णय लिया। उन्होंने प्रसारण किया : "बमों को न उड़ाया जाय, हम हथियार डाल रहे हैं।"

बम कहां उड़ना था। बम कहां गिरना था। वह सब तो प्रचार था। वह सब मिथ्या था। पर अंग्रेजों की मुराद पूरी हुई। उन्हें मुंह मांगी मुराद मिल गई। अर्जेन्टाईना की फौजों ने आत्म-समर्पण कर दिया।

इस तरह नये-नये तरीकों से लड़े गये फॉकलैण्ड युद्ध की इतिश्री हो गई।

बाबर ज़हर पचा गया

[मेरे पिता (स्व०) ठाकुर बेनीमाधोसिंह की डायरी के एक पृष्ठ से]

दिल्ली की सल्तनत का जन्म १२०६ में हुआ था और सन् १५२६ में उसका पूर्ण रूप से अन्त हो गया।

सुल्तान इब्राहीम लोदी की गलत नीति तथा उसके सरदारों तथा अमीरों पर अत्याचार करने का भी बुरा असर पड़ा। हालत यह हो गयी कि सरदार अपने प्राणों की रक्षा के लिए इतने भयभीत रहने लगे कि उनके सामने सिवाय इसके चारा न था कि वे किसी बाहरी शक्ति को भारत पर आक्रमण करने के लिए आमंत्रित करते और इब्राहोम के अत्याचारों से मुक्ति पाते।

बहमनी राज्य की स्थापना मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में हुई। इस वंश का अंतिम शासक कल्लीमुल्लाह था। वह अयोग्य एवं निर्बल था। मंत्री बरोद ने उसे गद्दी से उतारकर स्वयं को शासक घोषित किया। इस प्रकार बहमनो राज्य का पतन हुआ।

जहीरुद्दीन मुहम्मद बाबर। १५२६ ई०। उन दिनों दिल्ली में इब्राहीम लोदी का शासन था। उसके सरदार उससे रुष्ट थे। पानीपत के ऐतिहासिक मैदान में बाबर ने उसे करारी हार दी। आगरा-दिल्ली पर अधिकार कर लिया। उत्तरी भारत से लोदी वंश का आधिपत्य समाप्त हो गया।

रशब्रुक विलियम्स के शब्दों में: "इस विजय से बाबर के

दुर्दिनों का अन्त हो गया।"

'तुजुक-ए-बाबरी के अनुसार, "शुक्रवार, १६ खी-उल अव्वल ९३३ हिजरी को खास वाकयात हुआ। इब्राहीम लोदी की मां को मालूम पड़ा कि हिन्दुस्तानियों की बनाई हुई कुछ चीजें मैंने खाई हैं। हुआ यह कि तीन-चार माह पहले मैंने इब्राहीम लोदी के ५०-६० बावर्चियों को बुलाया था। उनमें से मैंने चार बावर्ची अपने लिए चुन लिए। इस बात का पता जब इब्राहीम की मां को लगा तब उसने एक दूत इटावा भेजा और अपने विश्वासपात्र अहमद को बुलवाया। सुल्तान का भोजन अहमद चखता था। वह बाकवाल कहलाता था। इब्राहीम की मां ने एक दासी के मार्फत एक तोला जहर भिजवाया। वह जहर अहमद को दे दिया गया। अहमद ने जहर रसोइये को दे दिया। जहर की तसदीक इब्राहीम की मां ने दूसरी दासी के मार्फत करवा ली।

मेरा भाग्य मेरा साथ दे रहा था। बर्तन के बजाय जहर तश्तरी में पड़ गया। जब रकाबियों में मांस रखा जा रहा था चखने वालों की निगाह बचाकर अहमद ने जहर को रोटी के पतले टुकड़ों पर डाल दिया। रोटी के टुकड़ों पर उसने मक्खन से बुझा मांस रख दिया। घबराहट के मारे वह आधा जहर हीं डाल पाया। आधा जहर उसने भट्ठी में झोंक दिया।

शुक्रवार को दोपहर की नमाज के बाद खाना परोसा गया। मुझे खरगोश का मांस पसंद है। मैंने कुछ खाया। फिर बहुत सी भुनी गाजरे खाईं। धुएं से सूखे हुए मांस के एक या दो निवाले भी मैंने खाए। मुझे उबकाई आने लगी। थोड़ा खाना भी खाया। फिर जोर से उबकाइयां आईं। मैं गुसलखाने की ओर भागा। वहां पर मुझे तेजी से वमन हुआ।

भोजन करने और शराब पीने के बाद मुझे कभी वमन नहीं हुआ था। मुझे शक हुआ। बावर्चियों को मैंने उसी वक्त हिरासत

में ले लिया और मांस कुत्ते को खिलवाया। मांस खाने के बाद कुत्ता बीमार हो गया और उसका पेट फूल गया। उस पर पत्थर फेंके गए। उसे लतियाया गया। पर कूं-कूं करता हुआ वह वहीं पड़ा रहा। दोपहर तक वह बेहाल रहा। दोपहर बाद वह चलने-फिरने लगा।

वह खाना दो जवान लड़कों को खिलाया गया। उन्होंने सवेरे वमन किया। वह बीमार पड़ गए। काफी दिनों के बाद तन्दुरुस्त हो पाए।

सोमवार दरबार का दिन था। अमीरों और दरबारियों को मैंने दरबार में तलब किया। उनके सामने बावर्चियों और इब्राहीम की मां की दोनों दासियों से हालात की जानकारी ली। वह डर गए। उन्होंने सब कुछ सच-सच बता दिया। मैंने हुक्म दिया कि खाना चखने वाले के टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएं। बावर्चियों की खाल खींच ली जाए। एक दासी को हाथी के पैरों से कुचलवा दिया जाए। दूसरी को गोली से उड़ा दिया जाए। इब्राहीम लोदी की मां को हिरासत में ले लिया जाए। उसकी किस्मत का फैसला और किसी दिन के लिए मुल्तवी कर दिया। दरबार खतम कर दिया। मैंने फिर एक प्याला दूध पिया। सोमवार को मैंने मख्तूम के फूल और तारियक फारूक दूध में मिलाकर पिए। मेरा पेट साफ हो गया। शनिवार को मेरे पेट से एक गहरी काली चीज निकली, रोग का कोई भाग अब बचा नहीं था। अल्लाह का शुक्र है।

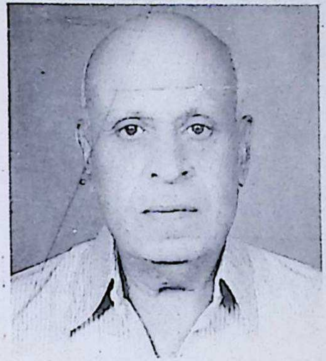
मुगल साम्राज्य की बाबर बुनियाद था और उसके पोते अकबर ने मुगलिया सल्तनत की मेहराब खड़ी की थी। १९ दिसम्बर, १५३० ई० को वह इस संसार से हमेशा-हमेशा के लिए बिदा हो गया। उसकी मृत्यु सन्देहजनक परिस्थितियों में हुई थी। बाबर द्वारा अपने प्रिय पुत्र हुमायूं की बीमारी को पढ़ लेना

और तत्काल उसकी मृत्यु होना युक्तिसंगत नहीं लगता।

बाबर ने पहली बार ज़हर पचा लिया पर उसे ज़हर देने का सूत्रपात हो चुका था। शुरुआत हो चुकी थी। इब्राहीम लोदी की मां ने यह शुरुआत कर दी थी। फिर हो सकता है कि बाबर को किसी और ने ज़हर दे दिया हो, जिसे वह पचा नहीं सका।

फिर भी, बाबर ज़हर पचा चुका था। तवारीख का काम है कि इस पर आगे रोशनी डाले।

□□



ठाकुर घनश्याम नारायण सिंह की ख्याति लेखक और विचारक, दोनों रूप में है। उनका जन्म नागपुर के एक कुलीन परिवार में हुआ। पिता ठाकुर बेनीमाधो सिंह तत्कालीन गुप्तचर पुलिस में अधीक्षक थे।

सन् १९४२, के "भारत छोड़ो आंदोलन" में भाग लेने के कारण, विश्वविद्यालय की पढ़ाई त्यागनी पड़ी। विवश हो अंग्रेज सरकार को उन्हें देखते ही गोली मार देने का फरमान जारी करना पड़ा।

आजादी के पश्चात आपने एम० ए०, एल० एल० बी० व साहित्यरत्न का अध्ययन पूरा किया और म० प्र० पुलिस की सेवा में रहकर, उसका सम्पूर्ण हिन्दीकरण किया।

आचार्य बिनोवा भावे, जयप्रकाश नारायण, मेजर जनरल यदुनाथ सिंह के साथ अपनी जान जोखिम में डालकर डाकुओं के आत्मसमर्पण में उल्लेखनीय कार्य किया।

लेखक के दो सौ से अधिक लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छप चुके हैं जिनका अनुवाद अंग्रेजी, मराठी, कन्नड़, गुजराती, मलयालम आदि भाषाओं में हुआ है। सन् १९६२ में मध्यप्रदेश शासन ने लेखक की कृति 'पिंडारी ठग और डाकू' पर प्रथम पुरस्कार प्रदान किया।

आपकी रचनाएँ ठाकुर विश्वनारायण सिंह द्वारा करोड़ों दृष्टिहीनों के लिए ब्रेल-लिपि में अनूदित की जा चुकी हैं।